गुरु ज्ञान दर्पण

ब्रह्म की अनुभुति करायी जा रही है, कुछ सालो से।
भाग्यशाली अनुभव करते, महापुरुषो के, संग में आ जाने से।।

रचयिता

सन्त श्री ज्ञानानन्द जी महाराज

लोहरवाड़ा निवासी

प्रकाशक :
आध्यात्मिक गौ सेवा संस्थान, लोहरवाड़ा

Scanned by CamScanner

वक्र तुण्ड महाकाय ,सूर्यकोटि समप्रभ:।
निर्विध्नं कुरू मे देव ,सर्व कार्येषु सर्वदा ।।

मॉ सरस्वती नमस्तुभ्यं,नमस्तुभ्यं वरदे काम रूपिणी।
गुरु महिमा आरम्भ करिष्यामि, सिद्धं भवेतु सर्वदा ।।

गुरु महिमा अनोखी हैं,मन बुद्धि से बाहर।
ज्ञानानन्द नेति-नेति, कहते सब का सार ।।

'' श्री ''

इस जगत में गुरू की महिमा तो अतुलनीय, अवर्णनीय, अनोखी, अनुपम, अकथनीय है। अगर गुरु की महिमा का यशोगान करते हैं तो वो सुरज को दीपक दिखाना ही होगा जिस प्रकार सुरज को कोई अज्ञानी दीपक लेकर सुरज का बोध करवाना चाहे तो वो कैसे सम्भव होगा सुरज तो दीपक को क्या सम्पूर्ण इस चराचर जगत को ही प्रकाशित करता है, ऐसे भास्कर रूपी गुरु की महिमा का यशोगान किस प्रकार किया जावें। कैसे करें किन शब्दों में गाऐं, हम तो अज्ञानी बालक हैं। फिर भी कुछ गुरू महिमा का यशोगान मैं कर रहा हूँ वो सदगुरु के चरण कमलो को समर्पित

Scanned by CamScanner

गुरू साक्षात् पर ब्रह्म सच्चिदानन्द हैं इन शब्दों की महिमा का यशोगान गुरू गीता में इस प्रकार किया गया है -

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु, गुरु देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परंब्रह्म, तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

गुरु ही ब्रह्मा का रूप धारण करके शिष्य के अन्त:करण में आत्मज्ञान की लौ को जाग्रत करता है। गुरु ही विष्णु का रूप धारण करके आत्मज्ञान की रक्षा करता है। गुरु ही त्रिकाल दृर्शी शिव का रूप धारण करके अज्ञान रूपी दुष्ट का संहार करता है। वो ही पार ब्रह्म सद्‌गुरु शिष्य को आत्म का बोध करवाकर मोक्ष प्रदान करता है। श्रुति में आया हैं--

"गुरो गुरुणां ईश्वरो"
गुरुओं का गुरु ईश्वर है।

गुरु गीता में भी गाया है --

नित्यं ब्रह्म निराकारं निर्गुणं बोधयेत् परम्।
भासयन् ब्रह्मभावं च द्वीपो द्वीपान्तरं यथा।।

गुरूदेव वे है जो नित्य, निर्गुण, निराकार, परब्रह्म का बोध देते हुए जैसे एक दीपक दूसरे दीपक को प्रज्वलित करता है, वैसे शिष्य में ब्रह्म भाव प्रकट करते हैं।

Scanned by CamScanner

गुरूदेव वे है जो नित्य, निर्गुण, निराकार, परब्रह्म का बोध देते हुए जैसे एक दीपक दूसरे दीपक को प्रज्वलित करता है, वैसे शिष्य में ब्रह्म भाव प्रकट करते हैं।

नित्य सच्चिदानन्द परम ब्रह्म अपने भक्तों का उद्धार करने के लिए प्रकट होता है।

सद्गुरु परम ब्रह्म है, महिमा अगम अपार।
तारण इन जीवों को, जग में लिया अवतार॥
जग में लिया अवतार, ज्ञान की लेकर नैया।
अधमी लिया उबार, गुरु बन कर खिवैया॥
सतगुरु सम ना देव, श्रुति बतावें यह मर्म।
ज्ञानानन्द गुरु है, साक्षात् है परम ब्रह्म॥

सद्गुरु तो साक्षात् परम ब्रह्म ही है वो ही भक्तों के कल्याण करने के लिए सगुण साकार रूप में प्रकट होता है जिसको अवतार शब्द से सम्बोधित किया जाता है-

अवतार क्या है ?

अवतार शब्द अव्य+तार शब्द से बना हैं अव्य जिसका अर्थ शरीर व तार का अर्थ तारने के लिऐ अपने भक्तों को तारने के लिये शरीर धारण करके अवतरीत होता है सो अवतार कहलाता है।

Scanned by CamScanner

अवतार के मुख्य दो भेंद माने जाते है।

1. नित्य अवतार

2. निमित्त अवतार

1. नित्य अवतार – नित्य अवतार साक्षात् सद्गुरु का रूप धारण करके हर घड़ी हर पल में जिज्ञासुओं के हृद्य का अन्धकार का नाश करने के लिए प्रकट होता है। नित्य अवतार सद्गुरु का तीन रूपों में जिज्ञासुओं का उद्धार करते है।

1. उपदेशक नित्य अवतार

2. आवेशक नित्य अवतार

3. प्रेरक नित्य अवतार

उपदेशक नित्य अवतार- आचार्य का रूप धारण करके उपदेशक खुद् सद् उपदेश देता है और उपदेश पर चलता भी है और अपने शिष्यों को भी उन उपदेशों पर चलाता है। उसे उपदेशक नित्य अवतार कहा जाता है।

आवेशक नित्य अवतार – जिज्ञासु के अन्त:करण में उत्पन्न होनी वाली भ्रान्तियों व संशय को मिटाने के लिए किसी भी रूप में प्रकट होना आवेशक कहलाता है।

प्रेरक नित्य अवतार – प्रेरक नित्य अवतार वो होता है जो मानव को बुरा कार्य करने से रोकता है।

Scanned by CamScanner

2. निमित्त अवतार – जो किसी विशेष कार्य के निमित्त प्रकट होता है, उसे निमित्त अवतार कहा जाता है। जैसे–रावण का वध करने के लिए भगवान श्री राम का अवतार हुआ, कंस का वध करने के लिए भगवान श्री कृष्ण का अवतार हुआ, ये सब निमित्त अवतार कहलाते है। निमित्त अवतार को तीन रूपों में बताया गया है।

1. पूर्णा अवतार
2. अंशा अवतार
3. कला अवतार

पूर्णा अवतार –16 कलाओं से सम्पन्न पूर्णा अवतार कहलाता है।

अंशा अवतार–14 कलाओं से सम्पन्न अंशावतार कहलाता है

कला अवतार – 12 कलाओं से नीचे की कलायें जिनमें हो वो कलावतार कहलाता है।

वैसे ही पारब्रह्म सच्चिदानंद जो निर्गुण निराकार होने से जब तक कार्य नहीं करेगा, तब तक सगुण साकार रूप में प्रकट नहीं होगा, वो ही पारब्रह्म सच्चिदानंद ही शिष्यों का उद्धार करने के लिए सगुण साकार रूप में प्रकट होता है। जिस प्रकार लकड़ी में अग्नि होती है, मगर लकड़ी को जलाती नहीं है। वो ही लकड़ी जब आपस में घर्षण करती है, तो अग्नि प्रकट हो जाती है। वैसे ही पारब्रह्म प्रत्येक

Scanned by CamScanner

मानव के अन्त:करण में है। वो ही गुरु के रूप में प्रकट होकर अज्ञान रूपी तम को नष्ट करता है, और ज्ञानरूपी दीपक की लौ को जाग्रत करता है।

गुरु चरणों की कुंडली

गुरु चरणों की धूलि से, मिटता सकल अज्ञान।
आदि व्याधि नहीं रहवे, पद पावते निर्वाण।।
पद पावते निर्वाण, जीते जी ब्रह्म स्वरूप।
सब तीर्थ चरण में, ज्याकि महिमा बड़ी अनूप।
ज्ञानानन्द फल यह, उत्पति विनाश न हो शुरू।
मोह भव ग्रह मेट, कृपा करत है सतगुरु।।

अर्थ :- महा अनर्थो की खान अपने स्वरूप का अज्ञान है ओर यह अज्ञान सद्गुरु देव की चरणों की धूलि को अपने मस्तिष्क पर धारण करने से अज्ञान मिट जाता है अर्थात् सद्गुरु के प्रति इतनी अगाढ़ श्रद्धा हो तो आदि व व्याधि कुछ भी नहीं रहती है, व्यक्ति को तीन प्रकार के तापों से छुटकारा मिल जाता है। और जीते जी ही वह मोक्ष को प्राप्त करके निर्वाणी हो जाता है। ऐसे निर्वाणी महापुरूष के चरणों में सारे तीर्थ निवास करते है।

दृष्टांत:-

एक भाई यात्रा के विचार से कई यात्रा को जा रहा था, रास्ते में रात हो जाती है,ओर उसको एक महात्मा की

Scanned by CamScanner

कुटिया दिखाई देती है, वो भाई महात्मा जी की कुटिया में प्रवेश कर जाता है।अन्दर में गुरुदेव विराजमान थे, उन्होंने जाकर दण्ड़वत प्रणाम आदि किये। इतने में संध्या हो जाती है, गुरुजी ने भी संध्या की ओर भाई ने भी सहयोग दिया।बाद में भोजन प्रसादी प्राप्त की,ओर गुरुजी ने विश्राम किया और उन भाई को भी निद्रा आने वाली ही थी। ठीक ही उन्होंने एक दृश्य देखा। कि दो काली -काली गाये आयी,और गुरु जी के चरणों को स्पर्श कि,और आश्रम की खुली जगह में आकर बैठ गई। तो धीरि-धीरि वो काली गाये सफेद रूप में आ गई यह आश्चर्य वो भाई ने देखा ओर रात भर नींद भी नहीं आयी, और सुबह उठकर गुरु जी को प्रणाम किया और गुरु जी से कहा गुरु जी रात को एक दृश्य दिखा। गुरु जी ने कहा बेटा पहले यात्रा करके आओ वो सब बाद में बताऊंगा। मगर उसने हठ पकड़ ली, और कहा गुरुदेव मैं यात्रा में नहीं जाऊंगा। जब तक मुझे यह रहस्य नहीं बताओगे। इस रहस्य का राज क्या है। तो उसका हठ देखकर गुरुजी ने कहा कि बेटा ! की सारी दुनिया अपना पाप धोने के लिए गंगा-यमुना में जाती है और गंगा-यमुना में पाप हो तो वह पाप को कहा जाकर के धोये। तो यह सारी दुनिया का पाप जो गंगा-यमुना में रहता है सौ पाप को संतो के चरणों में आकर ही धोती है सौ बेटा वो गंगा-यमुना थी। एक जगह मीरा बाई ने भी लिखा है किः-

Scanned by CamScanner

"तीर्थों मे जावे उण्डे छाप लगावे,
पर गंगा जमुना संतो के चरणो मे सामी आवे,
माने संतो मे समागम मन भावे।"

गंगा राम जी ने भी लिखा है एक जगह:-

"अड्ष्ठ तीर्थ गुरु चरणो मे, वाही बैठ के नहाया।
गुरु ज्ञान का लिया झकोला, सारा पाप मिटाया।।"

इस प्रकार से सभी तीर्थों का निवास गुरु के चरणों में बताया है।

उन निर्वाणी महापुरूषों की सेवा का यह फल मिलता है कि जिस फल का कभी उत्पति व विनाश नहीं होता उसका अक्षय फल मोक्ष मिल जाता हैं।

गुरु शब्द का अर्थ अर्थात् गुरु क्या है ?

गुरु शब्द दो अक्षरों से मिलकर बना है गु+रु गु का अर्थ गु अक्षर "अंधकार" व रु "प्रकाश" का बोधक है।
अर्थात् संपूर्ण अंधकार को नष्ट करने वाला या ज्ञान की और अग्रसित करने वाला गुरु कहलाता है। गुरु गीता में भी इसका स्पष्ट वर्णन आया है।

Scanned by CamScanner

" गुकारं च गुणातीतं रूकारं रूपवर्जितम्।
गुणातीतम रूपं च यो दद्यात् सगुरुःस्मृतः।। ,,

।। गुरु गीता–47 ।।

गुरु शब्द का " गु " अक्षर गुणातीत अर्थ का बोधक है, ओर रु अक्षर ' रूप रहित स्थिति ' का बोधक है। ये दोनों स्थितियाँ जो देते है उसको गुरु कहते है। गुरु ज्ञान रूपी विद्या प्रदान करने वाला है। विद्या क्या है ? विद्या 'विद्' धातु से बनी हैं जिसका अर्थ है "जानना"। जो आत्म तत्व को जानता है वो ही सद्गुरु कहलाता है अर्थात् कहलाने योग्य है। विद्या के दो स्वरूप है। परा विद्या व अपरा विद्या।

1. परा विद्या – परा विद्या उसे कहते है जिससे अपने निज स्वरूप का बोध होता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस विद्या को पुस्तकों से जाना नहीं जा सकता और न ही किसी से सीखा जा सकता है, यह तो केवल वही गुरु इसके रहस्य को बता सकता है जिसने स्वयं आत्मज्ञान अर्जित किया है। ऐसी विद्या जो दे, उसे सद्गुरु कहा जाता है।

2. अपरा विद्या – वो विद्या जिसको जानकर मानव जीवन निर्वाह करने योग्य बनता है ऐसी विद्या देने वाला गुरु

Scanned by CamScanner

कहलाता है। अतः आप गुरु ओर सद्गुरु में अंतर समझ गए होगें।

सद्गुरु कौन ?

आज इस कली काल में ऐसा प्रचलन देखा जाता है कि सीधे-सादे जिज्ञासु जनों को गुमराह करने के लिए पाखण्ड़ी सद्गुरु का चोला धारण करके सत्मार्ग से च्युत कर देते है, और अपने मत को श्रेष्ठ करने के लिए उन भोले जिज्ञासुओं को ऐसा उपदेश देते है, कि वो दूसरों की बात को न सुनें, उन पाखण्डियों को यह भय रहता है, कि, कहीं उनका भाण्डा न फूट जाये। इस रहस्य का भान करवाने के लिए

एक दृष्टान्त है:-

एक राजा का पुत्र शिकार खेलने के लिए जंगल में निकलता है शिकार खेलते-2 एक घने जंगल मे पहुंच जाता है, सहसा वहॉ पॉच लुटेरे उसको लूट लेते है, और उस राजकुमार की ऑखे फोड़ देते है। जब वह राजकुमार इधर-उधर भटकता विलाप करता है। तब उसे एक सज्जन व्यक्ति मिलता है, और उसे शीतल जल पिलाकर उसे घने वृक्ष की छाया के नीचे बिठाता है। कुछ समय बाद राजकुमार से ही पूछता है कि आपकी क्या इच्छा है, राजकुमार कहता है कि मैं घर जाना चाहता हूॅ। सज्जन

Scanned by CamScanner

व्यक्ति द्वारा बार-बार उसे पूछा जाता है और राजकुमार का भी वही उत्तर होता है फिर सज्जन कहता है जैसा मैं कहूँगा वैसा तुम्हें करना पड़ेगा, बेचारा राजकुमार हां कह देता है ।तब सज्जन व्यक्ति उसे सांड की पूंछ पकड़वा देता है, और कहता है, कि तुम इसको मत छोड़ना, सांड़ का स्वभाव तो आप जानते ही हो, ज्यों ही सांड़ की पूँछ राजकुमार पकड़ता है, उस राजकुमार को वह सांड़ घसीटता हुआ घने जंगल की झाड़ियों व पेड़ों से टकरा-टकरा कर उसको लहुलूहान कर देता है। अन्ततोगत्वा उस राजकुमार के हाथ उस सांड़ की पूँछ से छूट जाते है। वो उस घने जंगल की यातनाओं को सहता-रहता है। और अपने घर से वंचित रह जाता है। सिद्धांत यह है कि यहाँ राजा, राजकुमार, सज्जन, जंगल , पाँच चोर कौन है ? राजा है परमपिता परमात्मा, राजकुमार है जीवात्मा, जंगल है संसार , पाँच चोर है शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, सज्जन है पाखंड़ी गुरु।

1. शब्द:- जीवात्मा रूपी पुत्र को शब्द रूपी लूटेरा इस प्रकार लूटता है। जिस प्रकार शिकारी हिरण को पकड़ने के लिए मधुर वीणा बजाता है। उस वीणा की धुन को सुनकर हिरण इस प्रकार मस्त हो जाता है, कि उसे उस शिकारी के जाल का भी भान नहीं होता, और वो उस में फस जाता है एक स्वच्छद जंगल में अटकेलियाँ करने वाले

Scanned by CamScanner

उस हिरण की मनोस्थिति क्या होगी ? यह तो वही जान सकता है, उसी प्रकार ऐसे पाखण्ड़ी गुरु शिष्य को शब्द रूपी जाल में फसाते है कि वो उस जाल से निकल नहीं पाता है। उसका मन विभिन्न विचारों में, विभिन्न भावों में, विभिन्न रूपों में क्षीण हो जाता है।

2. स्पर्श:- स्पर्श रूपी विषय में यह जीव-आत्मा इस प्रकार फस जाती है। जैसे हाथी को पकड़ने वाले लोग जहाँ से हाथी पानी पीने जाता है। उस रास्ते में गहरा गड्ढा खोद देते है और ऊपर हल्की वस्तुओं से गड्ढ़े को इस प्रकार बन्द कर देते है कि हाथी को भान न हो। और उसके ऊपर दिखावटी हथिनी रख देते है ज्योंहि हाथी उसे प्राप्त करने की चाह करता है गहरे गड्ढ़े में गिर जाता है। पन्द्रह-बीस रोज बाद हाथी की शक्ति क्षीण होने के बाद हाथी को पकड़ लेते है। वैसे ही जीवात्मा उस विषय में लुट जाती है।

3. रूप:- जीवात्मा रूप विषय में इस प्रकार लुटती है जैसे जलते हुए दीपक की लौ को देख पतंगा अपनी इहलीला समाप्त कर देता है।

4. गन्ध:- जीवात्मा को गन्ध विषय इस प्रकार लुटता है जिस प्रकार भँवरा पुष्प की गंध में इतना मस्त हो जाता है कि अपनी सुध ही भूल जाता है ज्योंहि सूर्यास्त

Scanned by CamScanner

होता है पुष्प में ही बन्द हो जाता है। भॅवरे में काष्ठ को काटने की क्षमता होती है लेकिन वो गंध के वशीभूत होकर कोमल पुष्प की पंखुड़ियों को नहीं काट पाता है जब वह पुष्प ड़ाली से कटने के बाद सरोवर में पहुँच जाता है तब हाथियों ब्दारा उस पुष्प को तहस-नहस किया जाता है जिससे भंवरा नष्ट हो जाता है।

5. रस:- ज़ीवात्मा रस विषय के स्वाद में वंशीभूत होकर अपनी जान ऐसे गवा देती है जैसे मछली मछुवारे ब्दारा डाले गये कॉटे के आगे लगे आटे को प्राप्त करने के लिए अपनी जान गवा देती है।

पाखण्ड़ी धर्म के ठेकेदार व्यक्ति धैर्य विश्वास देता हुआ अपने मत को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए दूसरे ज्ञानियों का सत्संग सुनने के लिए भी मना कर देते है, क्योंकि सत्संग से विचार उत्पन्न होता हैं और विचार उत्पन्न होने से उन पाखण्ड़ीयों की पोल खुल जाती है।

एक दृष्टांत में आया हैं:-

किसी ग्राम में एक बनियॉ आटा, घी वगैरह की दूकान करता था सो रोज ही एक जाट उसके पास घृत को बेचने के लिये लाता था और वह बनियां आधे दाम पर

Scanned by CamScanner

घृत को जाट से खरीद कर लेता। एक दिन दूसरे जाट ने उस बेचने वाले जाट से पूछा तू बनियां को घृत कैसे बेचता है? उसने कहा चार सेर रूपये का। जाट ने कहा घृत का भाव आठ सेर का है वह तुमको ठग लेता है। अब जो बनियां तुम्हारे पास घृत के लिये आवे तब तुम कह देना भैंस बीमार है एक उल्लू को खरीद कर लाओं तो उसकी दवाई बनाकर भैंस को दी जाय। बनियां जब घृत के लिये उसके पास गया तब उसने उसी तरह कह दिया और इधर उल्लू वाले को सिखा दिया– बनियां तुम्हारे पास आवे तब सौ रूपया लेकर उल्लू उसको देना। बनियां उसके पास गया तब उसने सौ रूपया उल्लू का दाम बताया। घृत के लोभ से सौ रूपैया देकर बनियां उल्लू को खरीद लिया, उल्लू को लाकर बनियां, जब जाट के पास गया तब जाट ने कहा अब उल्लू की हमको कोई भी जरूरत नहीं है और घृत का दाम दूना बताया। बनियां दूकान पर आकर बैठ गया, जो कोई खरीदार आकर आटा वगैरह को पूछे वह बनियां साथ ही उल्लू को भी बता देता। यह तो दृष्टांत है। दृष्टांतों में आजकल के बद्धज्ञानी जहां पर कोई व्यवहार की वार्ता भी होती हो वहाँ पर भी वह अपना ज्ञान ही छांटने लग जाते है इसी वास्ते उनका एक भी पूरा नहीं होता है।

Scanned by CamScanner

वह अपना ज्ञान ही छांटने लग जाते है इसी वास्ते उनका एक भी पूरा नहीं होता है।

ऐसे बद्धज्ञानी जिन्हें खुद को ही शान्ति नहीं है, वो दूसरों को क्या शांति देगें ? ऐसे बद्धज्ञानी जो केवल वाचक ज्ञानी है, जो हरपल रागद्धेष, ईर्ष्या, काम-क्रोध में फूलते रहते है। वो इन दुर्गुणों के कचरे में ऐसे फस जाता है, जिस प्रकार नाली का गन्दा कीड़ा कहे कि में भँवरा हूॅ। तो यह कैसे सम्भव हो सकता है दोनों की स्थिति में तो रात-दिन का अन्तर है। जैसे ही पाखण्ड़ी व सत्गुरु में अन्तर होता है।

दृष्टांत में आया है:- एक नगर में धर्म परायण, दानी, यशस्वी, पराक्रमी राजा शासन करता था। उसके शासन में सम्पुर्ण प्रजा सुखमय जीवन व्यतीत करती थी। राजा के सम्मुख जो भी याचक आता, राजा यथा-शक्ति उसकी कामना पूर्ण करता। एक बार राजा ने एक यज्ञ करवाया। यज्ञ में अनेक ऋषी, मुनी, तपस्वी, ब्राह्मण आये। राजा के द्धारा यज्ञ सम्पन्न होने पर उसके राज्य में समृद्धि दिन-दुगुनी, रात-चौगनी हो गई। राजा इससे प्रसन्न हो एक प्रतिज्ञा करता है जो भी आत्मज्ञानी होगा उसको राज्य की और से सम्पूर्ण सुविधाएं दी जायेगी। यह घोषणा आग की तरह सम्पूर्ण राज्य में फैल गई। कुछ समय बाद उस राज्य में रहने वाला एक छोटे से गाँव के आत्मज्ञानी को

Scanned by CamScanner

राजा सम्पूर्ण सुविधाएं प्रदान किया करता था। उस आत्मज्ञानी की सुविधाओं को देखकर उसका पड़ोसी आत्मज्ञानी से पूछता है कि राजा तुम्हें यह सुविधाएं क्यों देता है? उसके व्दारा बताया गया कि मैं आत्मज्ञानी हूँ। उसने कहाँ कि राजा आत्मज्ञानी को सम्पूर्ण सुविधाएं देता है। कुछ ही समय व्यतीत होने पर गॉव का प्रत्येक व्यक्ति आत्मज्ञानी बनने का ढ़ोंग करने लगें। एक दिन इस राज्य की स्थिति यहाँ तक पहुँच गयी कि सम्पूर्ण गॉव की व्यवस्था करने से राज-कोश खाली हो गया। इससे राजा चिन्तित हो गया। राजा की बढ़ती हुई चिन्ता को देखकर घबराते हुए उसके एक मंत्री ने राजा से चिन्ता का कारण जानना चाहा। राजा ने उस मंत्री को सारा वृतान्त सुनाया,वृतान्त सुनते ही मंत्री ने कहा कि समस्या का समाधान हो गया, आपको चिन्ता करने की आवश्यकता अब नहीं है। अगले दिन ही राजा और मंत्री मिलकर सभी आत्मज्ञानियों को राज-सभा में बुलाते है और मंत्री व्दारा सभी आत्मज्ञानियों को कहा कि महाराज को ऐसा असाध्य रोग हो गया है, जिसका उपचार एक आत्मज्ञानी के शरीर को धुन के तेल निकाल करके शरीर पर मालिका करे तभी ठीक हो सकता है। इतनी बात सुनकर सभी ढ़ोगी आत्मज्ञानी एक-एक करके वहाँ से अपनी जान बचाकर भागने लगे केवल आत्मज्ञानी ही वहाँ बचा फिर राजा ने

उसको प्रणाम करके अपने सिंहासन पर बिठाया और सभी को जेल में डाल दिया। जिस प्रकार सिंहों के झुण्ड़ों के झुण्ड़ नहीं मिलते उसी प्रकार आत्मज्ञानी तो इस जगत में विरले ही मिलते है। पाखण्ड़ी, मिथ्यावादी, धुतवाचक तो झुण्ड़ों में इस जगत में मिल जाएगें। अत: ऐसे पाखण्ड़ी गुरु का त्याग करने में कोई हर्जा नहीं है। ऐसा ही गुरु–गीता में शिवजी ने कहा है कि:–

'' ज्ञान हीनो गुरु स्त्याज्यो मिथ्यावादी विडम्बक।
स्व विश्रांति न जानाति पर शांति करोति किम्।।''

अर्थ:– धूर्त, छली, पाखण्ड़ी, पापी, अभिमानी गुरु को त्याग करने में कोई दोष नहीं।

कबीर ने भी कहा है:–

" ज्यारा गुरु आंधला, चेला खरा निरंधा।
अन्धा अन्धा ठेलिया, दोनो कूप पड़ंत।।"

अर्थ:– अगर अंधे की लकड़ी को अंधा पकड़ेगा तो निश्चित ही खड्ढ़े में गिरेगा उसको कौन बचा सकता है।

इस पर एक दृष्टांत है:– एक नगरी में सूरदास रहता था। वो वहाँ पर रहने से परेशान था उसको एक ओर सूरदास मिल गया। उसने आये हुए सूरदास से पूछा भाई मेरे को इस नगर से बाहर जाना है। इसलिए मेरे को इस नगर से

Scanned by CamScanner

बाहर पहुँचा दे तो, मैं उसे दो रोटी दूगां। उस सूरदास ने दो रोटी के चक्कर में हॉ भर ली और कहा मैं तुम्हें नगर से बाहर पहुँचा दूंगा। दूसरे सूरदास को उस पर विश्वास हो गया और वो उस सूरदास की लकड़ी पकड़ कर उसके पीछे चलने लगा दोनों नगर के बाहर निकलने के लिए जा रहे थे। मगर उनको रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। वे इधर-उधर गलत रास्ते पर चल रहे थे। सूरदास ने कहा भाई तू भी तो कही अन्धा नहीं है तो उसने कहा नहीं मै अन्धा नहीं मैं सूरत्ता हूॅ। दोनों चलते गये और सामने अंध कूप आ गया और वे देखते-देखते कुए में गिर गये। जैसे अंधे की लकड़ी अंधा पकड़ेगा तो दोनों कुए में ही गिरेंगे। और क्या होगा? ऐसा ही होगा। जो अज्ञानी गुरु धारण करते है उन शिष्यों का यही हाल होगा वे यू ऐसे ही लख चौरासी में गिरते रहेंगे। इसलिए जिज्ञासु को चाहिए वो विवेक पूर्ण गुरु धारण करे मुर्ख गुरु का त्याग कर देना चाहिए।

परमानन्द जी ने भी कहा है

ठण्डा धोरी दूठ गुरू , कुआ मैं खारा नीर।
घर मैं औरत कुबारच्छया, चारों बहे शरीर।।
चारों बहे शरीर ,कलेजे चुभता काँटा।
नारी को छीटकाए, बैल का आटा साटा।।
कुआ खुदाओ दुसरा ,मीठी आवे सीर।

Scanned by CamScanner

कुआ खुदाओ दूसरा, मीठो आवे नीर।
परमानन्द गुरू, दूसरा कर्‌या आवे धीर॥

गुरु कैसा करे, गुरु कैसा हो?

पुस्तक के पूर्व में गुरु शब्द का अर्थ आप जान ही चुके हैं, कहा भी हैं:- ''**गुरु करें जाण, पानी पीवें छाण।**''

इन्सान को गुरु की भली प्रकार पहचान करनी चाहिए, क्योंकि इन्सान को मानव-देह बार-बार मिलने वाली नहीं है। इसलिए मानव को ब्रह्मनिष्ठ, श्रोत्रिय गुरु धारण करना चाहिए। ब्रह्मनिष्ठ गुरु के बिना तो कल्याण भी सम्भव नहीं इसलिए गुरु की सेवा करनी चाहिए। किसी कवि ने दोहे में लिखा हैं:-

''मात-पिता मिल जावसी, लख चौरासी मॉय।
गुरू-सेवा बन्दगी, फिर मिलण की नाय॥,,

जीव मात्र को हर योनी में माता-पिता तो मिल जायेंगे, पर गुरु-सेवा और गुरु की कृपा पुन: मिलने वाली नहीं है। यह तो मनुष्य शरीर में ही सम्भव हैं गुरु कि कृपा के बिना तो सत् शास्त्रों का रहस्य भी समझ में नहीं आता है।

इस पर एक दृष्टांत भी हैं:-

Scanned by CamScanner

एक नगर में सेठ रहता था सेठ बड़ा दानी व धर्म परायण था कुछ समय व्यतीत होने के बाद सेठ अपने पुत्र के लिए धन संचय करने का विचार करता है। तो सेठ मन्दिर की गुम्बद की परछाया में एक हजार मोहरें छिपा कर अपनी बही में लिख देता है कि ''मन्दिर के गुम्बद का सिर प्रात:काल चेत्र शुक्ल अष्ठमी को तोड़े और एक हजार मोहरे पावें'' धीरि-धीरि समय बीता सेठ की मृत्यु हो गई। सेठ की मृत्यु के बाद पुत्र द्धारा अत्यधिक ठग वृति से उनका धन पूर्णमासी का चाँद हो गया। और पुत्र की हालत बड़ी दयनीय हो गई। पुत्र ने विचार किया कि मेरे पिता तो बहुत ही धनवान थे उन्होंने कही किसी को धन उधार तो दिया ही होगा। यह सोच बहियों को देखने लगा बही में उसको ओर कुछ नहीं मिला केवल मोहरें वाली पंक्ति मिली उसे पढ़ वह बहुत प्रसन्न हुआ ओर तुरन्त मन्दिर की गुम्बद तोड़ने को उद्धत हो गया। मन्दिर की गुम्बद तोड़ने पर उसे कुछ भी नहीं मिला इससे वह बड़ा दु:खी हुआ ओर अपने पिता का उपहास करने लगा। इससे उसके पिता के मित्र ने ऐसा न करने का कहा तो उसने उसे सम्पूर्ण वृतान्त सुनाया उसे वृतान्त को सुन वह पहले तो पुन: उसे गुम्बद बनवाने के लिए कहता है तो वह कहता है कि मेरे पास धन नहीं है उसे सेठ का मित्र कुछ धन देकर गुम्बद का निर्माण करवाता है ओर उस बही में लिखी पंक्तियों को पढ़ करके उस गुम्बद की परछाई में खोदने के लिए कहता

Scanned by CamScanner

यह कि आत्मरूपी खजाना प्रत्येक मानव के अन्त:करण में है उसे वह शास्त्रों में बताय हुए ज्ञान से ही नहीं अपितु श्रोत्रिय सद्गुरु का सानिध्य पाकर ही प्राप्त कर सकता है। वैसे हि अपने आप शास्त्रों का अध्ययन करने से नहीं। ऐसे श्रोत्रियता के साथ-साथ ब्रह्मनिष्ठा भी होना अत्यावश्यक है। इन दोनों लक्षणों से पूर्ण गुरु के व्दारा ही जिज्ञासु का मंगल सम्भव है। दोनों में से एक लक्षण का होने से भी कल्याण सम्भव नहीं है। इस पर दृष्टांत सुना देता हुँ। जिससे यह बात ओर अधिक स्पष्ट हो जायेगी।

एक राहगीर अपने नगर को जा रहा था। रास्ते में एक नदी पड़ती थी। वह नदी के किनारें पहुँचा वहाँ पर एक अंधा व्यक्ति बैठा था उस राहगीर ने अंधे से कहा कि मुझे नदी के पार जाना है। तब अंधे व्यक्ति ने कहा कि तू मेरे कंधे पर बैठ जा मैं तुझे नदी पार करवा दूगाँ। लेकिन राहगीर ने उस पर विश्वास नहीं किया उसने सोचा कि पानी कहा पर गहरा है। व कहां पर भंवर है तो यह कैसे नदी पार करवा सकता है। राहगीर को तब दूसरा व्यक्ति दिखाई देता है। उसकी आंखे तो सही थी लेकिन वह पैरो से लगंड़ा था। राहगीर ने उस व्यक्ति को नदी पार उतारने के लिए कहा तो उस लंगड़े व्यक्ति ने राहगीर से कहा कि तू पचास कदम दक्षिण में चलना व दस कदम बायें मुड़कर पश्चिम में चलना ओर दायें मुड़कर पचास कदम चलना

Scanned by CamScanner

इस प्रकार कह वह लंगड़ा व्यक्ति चुप हो गया तो उस राहगीर ने उसकी बात सुनकर विचार किया कि यह खुद ही लंगड़ा है। इसको कैसे मालूम है कि इस नदी का रास्ता किधर है। इससे तो चला भी नहीं जाता हैं। यह तो कभी गया ही नहीं होगा। अत: इस पर विश्वास करना ठीक नहीं है। राहगीर को थोड़ा आगे चलने पर एक और व्यक्ति दिखाई देता है। जो शरीर से हृष्ट-पुष्ट था। आंखे भी सही थी व साथ में वह अच्छा तैराक भी था। राहगीर ने उस पर विश्वास कर लिया और वह उसके साथ नदी पार करके अपने घर पहुंच गया।

इस दृष्टांत का सिद्धान्त यह है कि जो राहगीर हैं। वो जिज्ञासु है जो भवसागर रूपी नदी से पार होना चाहता है। अंधा इंसान वो है जो वेद वेदान्त को अच्छी तरह से जानता है। मगर ब्रह्म को देखने के लिए उसके पास विवेक रूपी आंखे नहीं हैं। अत: जिज्ञासु ने उस पर विश्वास नहीं किया। लगंड़ा व्यक्ति वो हैं। जिसके पास ब्रह्म को देखने के लिए विवेक रूपी आंखे तो हैं मगर वेद प्रमाण रूपी पांव नहीं है। अत: जिज्ञासु ने उस पर विश्वास नहीं किया तीसरा व्यक्ति वो है जो जिसके पास ब्रह्म को देखने के लिए विवेक रूपी ऑखे भी है व वेद प्रमाण रूपी पांव भी हैं।

इसलिए उस जिज्ञासु को उस पर विश्वास हो गया और वह उसके साथ भव सागर से पार हो गया। इसलिए

Scanned by CamScanner

दोनों लक्षण युक्त गुरु का होना आवश्यक है ओर वही भवसागर रूपी नदी से पार कर सकता है।

इसी प्रकार का एक दृष्टान्त मिथिला नगरी के राजा जनक का भी हैं:-

राजा जनक ब्रह्म अनुयायी धर्म परायण पुरूष था। उसने एक बार विशाल राज सभा का आयोजन किया ओर राज सभा में बैठे हुये विद्धत समाज से कहा कि मेरी हार्दिक इच्छा हैं कि मुझे घोडे की रकाब में पैर रखते ही आत्म ज्ञान हो जाये। राजा की इस बात को सुन उपस्थित विद्धान आश्चर्य चकित हो गयें ओर ये बात अग्नि की तरह सम्पूर्ण राज्य में फैल गयी, इस बात को सुन बड़े-बड़े श्रोंत्रिय विद्धान राजकिय इनाम पाने के इच्छुक दूर-दराज से लगभग 88 हजार विद्धान इकट्‌टे हो गये। प्रत्येक श्रोंत्रिय विद्धान बारी-बारी से राजा को उपदेश देने लगे लेकिन सफलता किसी के हाथ न लगी। राजा क्रोधित होकर सभी विद्धानों को जेल में डाल देता है। समय बीतने पर एक बार अष्टावक्र जी हठपूर्वक अपनी माँ से बार-बार अपने पिता श्री के बारे में पूछते है। माँ सम्पूर्ण वृतान्त अष्टावक्र जी को सुनाती है ओर कहती है कि उन विद्धानों में तुम्हारे पिता भी थे।

Scanned by CamScanner

इतनी बात सुनते ही अष्टावक्र जी ओर उनके मामा का लड़का दोनों राजा जनक के दरबार में पहुँच जाते हैं। सभा में मंत्री, विद्वान विराजमान थे। ज्योंहि अष्टावक्रजी की टेढ़ी-मेढ़ी आकृति को राजा व राज सभा में देखते ही सभी जोर-जोर से हंसने लगते है। उनको देख अष्टावक्र जी और जोर से हंसने लग जाते है। पण्ड़ितों ने उनके हंसने का कारण जानना चाहा तब अष्टावक्र जी ने भी उनके हंसने का कारण जानना चाहा। तब पण्ड़ितों ने कहा कि हम तुम्हारे टेढ़े-मेढ़े शरीर को देखकर हंस रहे है। ओर विचार कर रहे हैं कि जिसका शरीर ही साथ न दें वो ज्ञान क्या दे सकता है। तब अष्टावक्र जी शान्त स्वभाव से बोले है महामुर्ख राजा आत्म ज्ञान की चाह रखता हैं। और सभा इन चर्मकारों की करवा रखी है। अष्टावक्र की वाणी ने सभा में बिजली बरसा दी ओर सम्पूर्ण सभा में सन्नाटा छा गया। अष्टावक्र जी ने कहा है राजन् यदि तुम आत्मज्ञान पाना चाहते हो तो इन चर्मकारों को मेरी नजर से ओझल कर दे। राजा ने ऐसा ही किया ओर अष्टावक्रजी कहने लगे है राजन् ब्रह्म ज्ञान लेने की विधि ज्ञात है? राजा की शर्म से आंखे नीची हो जाती है। अष्टावक्रजी बोले हे राजन् पहले आप मुझे तुम्हारा तन-मन-धन-वचन अर्पण करिये, राजा जनक ने वैसा ही किया इसके तुरन्त बाद अष्टावक्र जी जनक को सिंहासन से नीचे उतरने का आदेश देते हैं और सिंहासन पर खुद जा बैठते हैं। और

Scanned by CamScanner

राजा को कहते हैं कि जहां सभी की जूतियॉ खुली हुई है वहॉ जाकर बैठ जा राजा वहॉ जाकर बैठ जाता हैं। राजा वहॉ बैठकर बार-बार आंखे मूंदता ओर खौलता है तब देख अष्टावक्र जी ने कहा कि खबरदार राजन् जो आपने मन से भी चिन्तन किया तो क्योंकि मन को भी आप मेरे को अपर्ण कर चुके हो। इतना कहते ही राजा जनक का मन संकल्प विकल्प से रहित हो गया ओर उसी समय राजा समाधिरस्थ हो गये इसके बाद राजा के प्रश्न के समाधान हेतू घोड़ा मगंवाया गया। और घोड़े की रकाब में पैर रखने के लिए प्रेरित किया, ज्योंहि राजा प्रेरित हुआ तब अष्टावक्र जी ने कहा की अपने मन को मुट्ठी में पकड़लो तो राजा ने कहा कि महाराज मन भी मुट्ठी में पकड़ा जाता है क्या?

तब अष्टावक्र जी बोले जिस प्रकार मन को मुट्ठी में नहीं पकड़ा जा सकता उसी प्रकार यह आत्मज्ञान भी मुट्ठी की वस्तु नहीं हैं जो मैं इसे पकड़कर आपको दे दूॅ। तुम्हारें प्रश्न का जवाब तो यही हैं राजन्।

दृष्टान्त का सिद्धांत यही हैं कि- जिस प्रकार राजा जनक को आत्मज्ञान की अनुभूति हुई उसी प्रकार पूर्ण गुरू के द्वारा यह संभव हैं ऐसा ही विवेक चुड़ामणि में भी कहा गया है-

Scanned by CamScanner

"श्रोत्रियोऽवृजिनोऽकामहतो यो
ब्रह्मवितमः।
ब्रह्मण्युपरतःशान्तो निरिन्धन
इवानलः।।"

जो श्रोंत्रिय हो, निष्पाप हो, कामनाओं से शुन्य हो, ब्रह्म वेताओं में श्रेष्ठ हो, ब्रह्मनिष्ठ हो, ईधन रहित अग्नि के समान शांत हो अकारण दया सिंधु हो। प्रणतः(शरणापन्न) सज्जनों के बन्धु हो उन गुरु देव की विनित और विनम्र सेवा से भक्ति पूर्वक आराधना करके उनके प्रसन्न होने पर निकट जाकर ही प्राप्त किया जा सकता हैं।

इसी बात को भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता के चौथे अध्याय के 34वें श्लोंक में बताया है-

"तद्विद्धि प्राणिपातेन परि प्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः।।"

अर्थात्- हे अर्जुन तू उन ब्रह्मवेता व श्रोंत्रिय महापुरूषों की विधि विधान से सेवा कर और सेवा से प्रसन्नचित हो जावे तब तू प्रश्न करना हे! गुरुदेव मैं कौन हूँ? और कहां से आया हूँ! ओर कहां जाऊंगा इत्यादि प्रश्न करने पर तेरे प्रति वे महापुरूष इस तत्व ज्ञान को कहेंगे।

Scanned by CamScanner

जिसको जानकर तु मुक्त हो जायेगा इसलिए गुरु की हर प्रकार से सेवा करनी चाहिए ताकि गुरु देव प्रसन्न हो जाये तो अपना कल्याण सहज हो जाये।

गोस्वामी तुलसी दास ने भी रामायण में लिखा है–

"गुरु बिन भवनिधि तरहि न कोई।
जो बिरंची शंकर सम होई।।"

अर्थात्– आत्मवेता महापुरूष के बिना कोई ब्रह्मा व शंकर भगवान के समान अमर विभूति धारण कर ले तो भी इस दुस्तर संसार से तिरना नहीं होगा।

इस पर एक दृष्टान्त भी हैं–

सुखदेव महामुनि बचपन में ही घर छोड़ कर चले गये। जंगल में जाकर योग साधना करके योग साधना के बल से ब्रह्मादिक लोकों में भी आने– जाने लगे, विष्णु भगवान के यहां भी आने–जाने लगे। एक दिन विष्णु भगवान के दरबार से अपने गन्तव्य की ओर आ रहे थे ,तभी वो कोई बात पूछना भूल गये। जब उलट कर गये तो उन्होंने देखा कि उनके आसन्न के ऊपर अमृत के छींटे लगाये जा रहे थे, तब उन्होंने भगवान से पूछा मेरे आसन्न पर ये इस प्रकार से जो छींटे दिये जा रहे हैं। उससे यह प्रतीत हो रहा हैं

कि मेरे बैठने से ये आसन्न अपवित्र हो गया। तब सुखदेव मुनि ने भगवान विष्णु से इसका कारण पूछा लेकिन भगवान विष्णु ने जैसे कैसे उसको टालना चाहा, लेकिन हठ में गिने जाने वाले योगी हठ के कारण सुखदेव मुनि ने भगवान विष्णु से बार–बार पूछने का आग्रह किया तब भगवान विष्णु ने कहा। आप बिना गुरु के हो इसलिए आपका यह आसन्न अपवित्र माना गया। बिना गुरु के तो पानी पीने का भी धर्म नहीं है। और उन्हें नुगरे की उपमा दी गई है। यह सुनते ही सुखदेव मुनि को एक दम झटका लगा ओर वो तुरन्त ही अपने पिता वेदव्यास के पास आये ओर कहने लगे कि पिताजी अगर बिना गुरु के मुक्ति नहीं होती है तो आपने मुझे पहले क्यों नहीं कहा। बेटा मै तेरे को पहले कहता तो तु मेरी बात को मानता नहीं लेकिन व्यक्ति ठोकर खाने के बाद ही संभलता है। तब सुखदेव मुनि ने पिता जी से पूछा कि अब क्या किया जावे तब पिता जी बोले कि आपको गुरु बनाना चाहिए सुखदेव मुनि ने पिता जी से पूछा की इस समय योग्य गुरु कौन है तब वेदव्यास जी ने बताया की इस समय तो राजा जनक ही योग्य गुरु बनाने लायक है। राजा जनक का नाम सुनते ही सुखदेव मुनि ने क्रोधित होकर कहा कि मैं त्यागी और उस गृहस्थी को गुरु बनाऊं। असम्भव, तब वेदव्यास जी ने कहा कि बेटा इसमें गृहस्थी और त्यागी की क्या

Scanned by CamScanner

बात है। गुरु ब्रह्मवेता होना चाहिए इसमें गृहस्थी और त्यागी क्या करेगा ज्ञानी का व्यवहार प्रवृति प्रदान व निवृति प्रदान प्रारब्ध है इसलिए इस समय राजा जनक ही गुरु बनाने योग्य हैं ,इसलिए तू राजा जनक को गुरु धारण कर लें। यह बात सुनकर सुखदेव मुनि घर से मिथला पुरी की ओर जाता है। और राजा जनक के द्वार पर पहुँच जाता है। उसी ही समय पहरेदारों ने उनको रोक लिया। तब सुखदेव मुनि ने पहरेदारों से कहा कि राजा जनक को जा के कहो कि सुखदेव मुनि आप से मिलना चाहते है तब राजा जनक ने पहरेदारों से कहा कि उसे कह दो की सात दिन तक वही खड़े रहे तब सुखदेव मुनि ने ऐसा ही किया और समाधिस्थ हो गये। सात दिन उनको एक-पल के समान लगे क्योंकि वो खुद महान तपस्वी थे। सात दिन के पश्चात् जब सुखदेव मुनि को राजा जनक बुलाते है तब राजा जनक एक नाटक रचते है जिससे वो अपना एक हाथ तो रानी के ऊपर और दूसरा हाथ अग्नि में रखे हुए थे। ज्योहि सुखदेव मुनि वहाँ पहुँचे तो उसे देख मन में विचार किया कि यह तो महान् गृहस्थी है बिना कुछ बोले ही वापस आने लगे तब राजा जनक ने उन्हें रूकने को कहा तभी एक द्वारपाल राजा को आकर कहता है कि महाराज नगर में आग लग गई है तब राजा जनक ने कहा कोई बात नहीं, थोड़ी देर बाद दूसरे द्वारपाल ने आ करके कहा है कि महाराज आग सम्पूर्ण गाँव में लग चुकी है तब

भी राजा यह ही जवाब देता है। जब तीसरा द्वारपाल आ करके कहता कि महाराज आग दरवाजे तक आ गई है तब भी राजा जनक यह ही कहता है लेकिन उसकी बात सुन सुखदेव मुनि दौड़ता है क्योंकि मुनि की लगोंटी दरवाजे पर रखी हुई थी। तब राजा जनक ने कहा तुम्हारा त्याग यही है क्या, मेरा तो सम्पूर्ण नगर ही जल गया तो भी मैं शान्त बैठा हूॅं। हे सुखदेव मुनि क्या तुम्हारा यह त्याग है। उनकी बात सुन सखुदेव लज्जा का अनुभव करते है।

सिद्धांत यह है कि–

जिस प्रकार राजा जनक का सम्पूर्ण ज्ञान मुनि शुकदेव को शान्तिदायक सिद्ध हुआ। उसी प्रकार बड़े–बड़े मुनियों व अवतारियों को भी शान्ति बिना गुरु के सम्भव नहीं है। जितने भी महापुरूष, ऋषि, मुनि हुए उन्होंने भी गुरु धारण किया है।

''मेरे प्यारे गुरु तेरा दरबार निराला, वा ! क्या कहना है। जो भी आये दरबार में वो माला–माल हो गया वा ! क्या कहना है।।''

गुरु का दरबार तो ऐसे ही निराला है जो भी इस दरबार में आता है वो कर्म कंगाली से दूर होकर माला–माल हो जाता है यह गुरु के बिना सम्भव नहीं है। जिस प्रकार

Scanned by CamScanner

दर्जी के बिना कपड़ा की सिलाई नहीं सीखी जा सकती, कुम्हार के बिना मटका नहीं बनाया जा सकता, सुनार के बिना आभूषण नहीं बनाया जा सकता है।

ऐसे ही हर युग में बड़े-बड़े ऋषियों, अवतारियों, तपस्वियों ने भी गुरु धारण किया है जैसे-

ब्रह्माजी ने हयग्रीव भगवान शंकर ने अंगीरा ऋषि को, अत्रि, कश्यप, मरिची के गुरु विखाना मुनि थे। सप्त ऋषियों के गुरु मत्स्य अवतार, सन-कादियों के गुरु हंस अवतार, भृगु ऋषि के गुरु वरूण ऋषि, प्रहलाद के गुरु दत्तात्रेय भगवान थे और रामचन्द्र जी के गुरु वशिष्ट मुनि, भगवान श्री कृष्ण के गुरु संदीपन ऋषि, नारद जी के गुरु संत कुमार जी, सर्वदेव के गुरु बृहस्पति व राक्षसों के गुरु शुक्राचार्य थे और मुनि शुखदेव के गुरु राजा जनक थे, जनक के गुरु अष्ठावक्र मुनि थें। नचिकेता के गुरु यमराज थे, ऐसा पौराणिक धर्मशास्त्रों में देखने में आया हैं।

गुरु के बिना किये हुये शुभ कर्मो का फल पशु योनि में जाकर भोगना पड़ता है। व अन्त में परलोक नहीं सुधार सकता है। गुरु के बिना तो भगवान को नमस्कार करते हैं तो वह स्वीकार्य नहीं है। अर्थात् गुरु के बिना सब निष्फल ही है।

Scanned by CamScanner

इस बात को गुरु गीता में भी कहा गया है-

"जपस्तपोव्रतं तीर्थं यज्ञो दानं तथैव च।
गुरु तत्त्वमविज्ञाय सर्वं व्यर्थं भवेत्प्रिये।। 21।।"

गुरु गीता में आया हैं-

किसी भी प्रकार की विद्या हो या ज्ञान हो उसे किसी दक्ष गुरु से ही सीखना चाहिए तभी उसके सद्परिणाम आते है। इसी प्रकार जप, तप, तीर्थ यज्ञ, दान आदि में भी गुरु का दिशा-निर्देशन आवश्यक है। कि इनकी विधि क्या है ? अविधि पूर्वक किए गए ये सभी कर्म व्यर्थ सिद्ध होते है। जिसका कोई उचित फल नहीं मिलता। भगवान शिव यह स्पष्ट निर्देश दे रहे है कि बिना गुरु के किसी का कोई भी कार्य सफल नहीं हो सकता इसलिए गुरु तत्व को जानना अति आवश्यक है। हठयोग, प्राणयाम आदि क्रियाएँ बिना गुरु के करने पर शरीर रोग ग्रस्त हो सकता है। कई क्रियाएँ ऐसी है जिनसे सिद्धियां प्राप्त होती है। जिनका दुरूपयोग करने पर मनुष्य को उन कर्मो का फल अवश्य भोगना पड़ता है। ये सिद्धियाँ आत्मज्ञान में भी बाधक बन जाती है। तबहि तो कहा है।

गुरु के बिना न ध्यान, न ज्ञान, न विद्या, न आत्म तत्व का विचार , न प्रेम, गुरु के बिना ज्ञान का विषय,

Scanned by CamScanner

हेतू प्रयोजन और अवधि यह सब समझना असम्भव ही है।

ध्यान क्या है ? ध्यान का स्वरूप क्या है ? ध्यान का फल क्या है? ध्यान की अवधि क्या है ? यह सब बिना गुरु के असम्भव है।

प्रेम का स्वरूप क्या है ?प्रेम का हेतु क्या है? प्रेम फल क्या है? प्रेम की सीमा क्या है ?

जीवन क्या है?जीवन का हेतु क्या है ? जीवन का स्वरूप क्या है?

इत्यादि प्रश्नों को गुरु के बिना समझना मुश्किल है। गुरु ही इन प्रश्नों का बोध करवा सकता है।

कुण्डली ने भी कहाँ है कि

गुरु के बिना संसार मे, भला किसी का नाहि।
गुरु बिन जाने ना आप, गुरु बिन भय न जाहि।।
गुरु बिन भय न जाहि ,गुरु बिन मिले न किनारा।
आन देव को त्याग, सतगुरु को करले प्यारा।।
सुघट मानुस समझे , मूर्ख समझे न सार मे।
ज्ञानानन्द गुरु बिन, भला न हो संसार मे।

गुरु बिना संसार में किसी का भी आज तक भला नहीं हुआ। गुरु की शरण ही सम्पूर्ण सुखों की खान है एवं दुखों की निवृति का साधन है। नाना देवों की उपासना भी फलदायक नहीं है। एक गुरु की उपासना सम्पूर्ण फलदायनी है।

गुरुपदेश तो ज्ञेयंशास्त्र कोटिभि:।

शास्त्रों का रहस्य गुरु के उपदेशों से ही जाना जाता है। करोड़ों ग्रन्थ पढ़ने से भी उसका ज्ञान नहीं हो सकता।

विवेक चूडामणि में भगवान शंकरचार्य ने छठे श्लोंक में फरमाया है–

"वन्दन्तु शास्त्राणि यजन्तु देवान्
कुर्वन्तु कर्माणि भजन्तु देवता:।
आत्मैक्यबोधेन बिना विमुक्ति नं
सिध्यति ब्रह्मशतान्तरेअपि।।

अर्थात् भले ही कोई शास्त्रों की व्याख्या करे, देवताओं का यजन करे, नाना शुभकर्म करे अथवा देवताओ को भजे , तथापि जब तक ब्रह्म और आत्मा की एकता का बोध नहीं होता तब तक सौ ब्रह्माओं के बीत जाने पर भी मुक्ति नहीं हो सकती।

Scanned by CamScanner

इस पर एक युक्ति इस प्रकार से है कि एक नगर में एक धनवान सेठ रहता था। उसका अच्छा कारोबार चलता था, परन्तु व्यापार में घाटा लगने के कारण वह दरिद्र हो गया और परिस्थितियाँ इस प्रकार बदली कि उसे एक सेठ के यहाँ नौकरी करनी पड़ी लेकिन उससे उसका गुजारा नहीं चला तो उस सेठ को छोड़कर अन्य सेठ के यहाँ नौकरी करने लगा उस सेठ से भी उसका गुजारा नहीं चला।

ऐसे कई सेठो के नौकरी करने के उपरान्त भी उसे लाभ नहीं मिला तो वह परेशान था तब उसका एक पुराना मित्र मिला तो उसने नगर के सबसे धनाढ्य सेठ के यहाँ नौकरी करने के लिए कहा यह बात उसके समझ में आ गई ओर वह नगर सेठ के यहाँ नौकरी करने लगा। उसके ईमानदारी से कार्य करने से सेठ प्रसन्न हुआ ओर उसको बुलाकर पूछा तेरा नाम क्या है ? और कितनी तनख्वाह लेना चाहता है ? उसने कहा कि मेंरे को केवल दो रोटी की आवश्यकता है मैं तनख्वाह नहीं लेना चाहता हूँ।

उसकी इस बात से सेठ अत्यन्त प्रसन्न हुआ, अब तो सेठ उसे अपना नजदीकी समझने लगा। एक दिन उस नौकर के कर्जदार आकर उससे अपना ऋण मागने लगे और उसे बुरा-भला कहने लगे ऐसा देखकर मालिक सेठ ने उनको पूछा और कहा कि तुम मेंरे नौकर के साथ

Scanned by CamScanner

ऐसा व्यवहार क्यों कर रहे हो तो उन्होंने कहा कि यह हमारा ऋणी है तब सेठ ने कहा ,तुम्हारी जितनी भी बहीयाँ है या लेखा-जोखा है ले आओं, सेठ ने बहीयों को देखकर उसका सारा ऋण चुकता कर दिया।उसने उसका कर्जा चुका दिया।

दृष्टांत का सिद्धांत यह है कि सेठ और दुसरा कोई नहीं है। यह जीवात्मा ही है जो कुकर्म करने से दरिद्र हुआ जब परेशान होकर वह अलग-अलग देवताओं की शरण में जाने लगा, इससे केवल सकाम कर्म करने का फल मिला लेकिन उसका जन्म-मरण रूपी दरिद्रता का नाश नहीं हुआ फिर उसे सच्चे मित्र रूपी सद्‌गुरु का सानिध्य मिला और सद्‌गुरु ने कहा कि तु इस भटकने को छोड़कर सच्चे एक परमात्मा की शरण में जा और वह वहाँ जाकर निष्काम भाव से सेवा कर तब वह गुरु के कहे अनुसार सेवा करने लगा।

जब समय पाकर यमराज रूपी साहूकार कर्जा मागने आया तो परमात्मा ने यमराज से कहा कि तुम्हार कर्ज रूपी कर्मो के बही कागज बताओ, तब यमराज ने तर्क देकर जीवात्मा को करता-भोक्ता सिद्ध किया,तब परमात्मा ने युक्ति से यह तर्क पेश किया कि यह तो हे ही नित्य शुद्ध मुक्त अकर्ता अभोक्ता तू इस पर झूठा आरोप लगाकर क्यो कर्जा मागता है तब यमराज ने अनेक तर्क बताये मगर परमात्मा ने प्रमाण देकर यमराज को निरुत्तर

Scanned by CamScanner

कर दिया ओर साहूकार को कर्ज (जन्म-मरण रूपी कर्ज) से मुक्त करा दिया।

इसलिए गुरुदेव इतने महान हुआ करते है अपनी शरण में आये शिष्य को हर प्रकार के दुःखों से छुड़ाकर परमानन्द की प्राप्ति करा देते है।

गुरु लौकिक धन भी दिया करते है और परमार्थ का धन भी दिया करते है शिष्य इस पर तू एक युक्ति ओर सुन! :-

एक नगर में एक सेठ के चार पुत्र थे। तीन पुत्र दुकान का काम करते थे एक पुत्र का लगाव साधु संतों के संत्संग में था कुछ दिनों बाद आपस में भाईयों मे झगड़ा होने लगा कि हम तीनों काम करते है और यह निठल्ला रहता है कुछ भी काम नहीं करता।

एक दिन उनकी मॉ ने सोचा कि गॉव के लोग विदेश कमाने जाया करते है वहाँ पर इस लड़के को भी भेज दे तो इनका झगड़ा समाप्त हो जायेगा। अतः मॉ ने उसे दो हजार रूपये देकर कमाने भेज दिया। यह सब जहाज से यात्रा करके समुद्र से गुजरते थे तो बीच में एक टापू पड़ता था, वहा कुछ देर के लिए जहाज रूकता था। जहाज रूका तो जहाज वाले ने कहा कि यहॉ नजदीक ही गुरु का आश्रम है, जिसकी इच्छा हो वह दर्शन कर लेवे बाकी घूम लेवे।

Scanned by CamScanner

एक घण्टा पूरा होने पर जहाज वाले ने आवाज लगाई सभी लोग आकर जहाज में बैठ गये लेकिन वह नहीं आया उसको बुलाने भेजा तो उसने कहा मैं तो यही रहूँगा और परमार्थ का धन कमाऊंगा।

वह वही रह गया तो गुरुजी ने सोचा यह परमार्थ का धन कमाना चाहता है तो उसे अपने स्वरूप का ज्ञान करा दिया फिर गुरुजी ने सोचा कि इसे लौकिक धन भी देना चाहिए, इसलिए उसे आश्रम की एक गाय चराने भेज दिया और कहा कि सामने टीले पर गाय चरा लाया कर कुछ दिन बाद गुरुजी ने कहा कि बेटा दो मिट्‌टी के पारसा लाना और सुबह सूर्योदय से पूर्व गाय का दूध निकाल कर समुद्र के किनारे रख देना।

गुरु के कहे अनुसार शिष्य ने ऐसा ही किया तीन दिन बाद गुरु जी ने पूछा बेटा कुछ मिला शिष्य ने कहा गुरु जी कुछ नहीं मिला।

उस दुध को पीने हंस-हंसनी का जोड़ा आया करता था एक दिन हंसनी ने हंस से कहा यह जो अपने लिए दुध रखता है यह अपना नौकर नहीं है इसको कुछ मजदुरी, अपन को देनी चाहिए अपने पास मोतीयों की कमी नहीं है अपनी चौंच में दो-दो मोती लाकर इसे देना चाहिए।

Scanned by CamScanner

हंस के भी यह बात समझ आ गई तो हंस के जोड़े ने यही किया अब शिष्य को रोजाना मोती मिलने लगे तब गुरुजी ने कहा इन मोतीयों को गाय के गोबर से बने कंडों मे रखाकर कंड़े दो तरह के होने चाहिए मोती वाले ओर बिना मोती वाले इसकी परख तूझे होनी चाहिए। कुछ दिनो बाद कमाने वाले जब वापस कमाकर उसी टापू पर आ गये उन्होंने उसे भी घर चलने को कहा।

अपने गुरुजी से आज्ञा लेकर उन कंड़ो को बाधाकर वह भी उनके साथ वापस गॉव आने के लिए जहाज मे बैठ गया। रास्ते में भोजन बनाने का ईंधन खत्म हो गया तो जहाज के यात्रीयों ने उसे कंड़े देने के लिए कहा उसने पहले तो मना ही कर दिया। लेकिन बहुत प्रयास करने पर एक कंड़ा दस कंड़े में देने को कहा ओर उसने बिना मोती वाले कंड़े उनको भोजन बनाने के लिए दे दिये।

जब सभी लोग वापस अपने गाव आ गये तो गाँव वाले उस सेठ के पुत्र का मजाक बनाने लगे यह मूर्ख है जो विदेश जाकर भी गोबर के कंड़े लेकर आया है।

कुछ समय बाद उस देश का राजा उस गाँव से गुजरा तो गाँव वाले राजा को अच्छी-अच्छी भेंटे देने लगे सेठ के पुत्र ने भी दो कंड़े अच्छी तरह कपड़े में लपेट कर राजा को भेंट प्रदान कि राजा ने उसे खोलकर देखा तो वह नाराज हुआ लेकिन उसने विचार कर उन कंड़ो को पानी

Scanned by CamScanner

के बर्तन में डलवा दिया कुछ ही समय बाद कड़े गल गये व उनसे चमकीले मोती बहार निकल आये राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने सेठ के पुत्र को अपने दरबार में बुलाया जब सेठ का पुत्र आया तो राजा ने उसकी बुद्धिमानी की प्रसंशा की ओर उसे पूछा कि कोई परेशानी हो तो बताओ तब सेठ के पुत्र ने राजा को कहा कि मैंने मेरे साथ विदेश कमाने जो लोग गये थे उनको मैंने एक कड़े के बदले दस कड़े लेने के लिए कड़े उधार दिये थे वह कड़े मुझे दिलवाओं।

राजा ने उन सभी को बुलवा लिया और उनको बताया कि इसके कंड़ों में दो-दो मोती थे वे कड़े इसको शर्त के अनुसार प्रदान करो तो सभी ग्रामवासी एक दुसरे का मुंह ताकने लगे और उससे क्षमा मांगी।

अब उसका मान गांव मे बहुत बड़ गया। यह गुरु सेवा का ही फल है। गुरुदेव अपने शिष्यों को लौकिक व परलौकिक धन दिया करते है।

वाल्मीकि रामायण में प्रमाण आया है-

"स्वर्गो धनं वा धान्यं वा विद्याःपुत्रा सुखानी च।
गुरु वृत्त्यनु रोधेन न किंचिदपि दुर्लभम्।।"

गुरुजनों की सेवा में स्वर्ग, धन, धान्य, विद्या पुत्र ओर सुख ये सब कुछ भी दुर्लभ नहीं है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी रामायण ने लिखा है-

"जे जन गुरु चरण रेनु सिर धरही।
सो जन सकल वैभव बस करही॥"

जो इंसान अपने गुरु के चरणों कि रज अपने मस्तिष्क पर धारण करता है वह संसार के सकल वैभव को अपने कब्जे में कर लेता है।

गुरु तो वह शक्ति हे जो न दिखाय देने वाले परमात्मा को भी प्रत्यक्ष दिखा दिया करते है। जैसे हाथ पर रखा आवला प्रत्यक्ष होता वैसे ही आत्म देव का अपरोक्ष रूप से अनुभव करवा देते है। और हमारे अन्दर की सभी कमीयों को दिखा कर दुर कर दिया करते है।

इस पर एक दृष्टांत है-

एक बहुत बड़ा शिल्पकार जगह-जगह मूर्तिया बनाकर बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर ली वह एक दिन द्वारिका जाकर भगवान श्रीकृष्ण की मूर्ति बनाने का प्रयास किया कई बार कोशिश करने पर भी वह भगवान की मूर्ति नहीं बना पाया वह जिस रूप में भगवान की मूर्ति बनाता भगवान उस रूप को बदल देते इससे वह अपना अपमान समझ कर सोचा कि इस जीने से तो अब मर जाना अच्छा है, ऐसा विचार कर वह घनघौर जंगल में चला जाता है,

वह मरने ही वाला था, उसे एक महात्मा दिखाई दिये महात्मा ने पूछा भाई क्या कर रहे हो तो उसने जवाब दिया कि मैं मरना चाहता हूँ महात्मा ने कहा तू मरना क्यो चाहता है उसने कहा मैं बहुत बड़ा मूर्तिकार हूँ जीवन में मैंने कभी ठोकर नहीं खाई लेकिन द्वारिका में जाकर मैंने ठोकर खाई है वहा बहुत से लोगो के सामने मेरा अपमाना हुआ, मैं मूर्ति बनाता और भगवान अपना रूप बदल लेते है।

महात्मा ने कहा यह तो बहुत छोटी सी बात है यह सुनकर उसको धैर्य हुआ। महात्मा ने कहा कि एक महीने तक तुझे मेरे साथ छुटाई-पिसाई करनी पड़ेगी। शिल्पकार ने वैसा ही किया और उसे दर्पण बनाना सीखा दिया और कहा कि इसे कागज में बांधकर ले जाना और वहा जाकर इसका पर्दा हटा देना उसने वैसा ही किया और सामने जाकर भगवान से कहा कि मैंने आपकी मूर्ति बनाना सीख लिया है अब में बिना औजारों के आपकी मूर्ति बना सकता हूॅं। और उसने वह कांच सामने लगा दिया उसमें भगवान जिस भी रूप को बदलते वह उसमें भी दिखाई देने लगा तब भगवान ने कहा बेटे यह किसने बताया, उसने कहा कि भगवान मैं मरने के लिए जंगल मे गया था, तो वहा एक महात्मा मिले उन्होंने मुझे यह युक्ति बतायी तब भगवान बोले की महात्मा ने जो बता दिया है उसके आगे तो मेरी भी नहीं चलती है ओर उसे गले से लगा लिया।

Scanned by CamScanner

सतगुरु अपने शिष्यों को विवेक रूपी दर्पण दिया करते हैं जिससे अपने अवगुण भी दिखाई देते है ओर निरंजन निराकार परमात्मा भी दिखाई देता हैं सतगुरू महिमा पर शास्त्रों में एक श्लोंक आया है–

"अज्ञानतिमिरान्धास्य ज्ञानाजंन शलाकया।
चक्षुरन्मीलितमयेन तस्मै श्री गुरुवे नमः ।।"

अर्थात् अज्ञान रूपी अंधेरे को दुर करने के लिए सद्‌गुरु ज्ञान रूपी अजंन प्रदान करते है जिससे वह परमात्मा स्पष्ट हो जाता है ऐसे गुरु देव को हम प्रणाम करते है।

गुरु का एक स्वरूप होता है, एक श्री विग्रह होता है, स्वरूप यानी जो सत् चेतन स्वरूप है, वह चेतन न किसी का विरोधी है, न किसी का सहयोगी है, मगर जिस श्री विग्रह के द्वारा शिष्य को लाभ मिलता है।

सुन्दरदास जी ने लिखा हैं–

"परमात्मा और परम गुरु दोनो एक समान।
सुन्दर कहत विशेष यह गुरु से पावे ज्ञान।।"

सुन्दरदास जी कहते है जिस आत्मज्ञान को हम पाना चाहते है वह श्री विग्रह से ही प्राप्त होता है यह श्री विग्रह पुरूष का भी हो सकता है वह स्त्री का भी हो सकता

Scanned by CamScanner

है इसमें आश्रम बंधन भी नहीं है वह गृहस्थ भी हो सकता है सन्यासी भी हो सकता है जात पात का भी बंधन नहीं है किसी भी अवस्था व उम्र का हो सकता है।

आगे सुन्दरदास जी महाराज ने कहा है कि-

"परमेश्वर व्यापक सब जग, घट धारे गुरु देव।
घट-घट को उपदेश करे, सुन्दर पावे भेव॥"

परमेश्वर सब जगह विद्यमान है लेकिन वह उपदेश नहीं कर सकता उपदेश केवल गुरुदेव ही कर सकते है, ऐसे घटधारी भी बहुत से होते हैं लेकिन जिसमें वेदों की महाकाव्य रूपी शब्द की सृष्टी द्वारा जिसे अपने स्वरूप का बोध हुआ है, वही गुरु कल्याण करने वाला है।

चरणदास जी ने भक्ति सागर में सात प्रकार के गुरुओं का वर्णन किया है।

पहला गुरु दाई कहिये, दूजा माई जान।
तीजा गुरु खिलवाड़ी, चौथा पिता पहचान॥
चौथा पिता पहचान, पाँचवा पाधा जानो।
छठा गुरु कन फूखा, ताहि पूजादि मानो॥
सातवाँ सतगुरु जानिये, जगसू करे उदास।
मुक्ति धाम सोई देत है, कहे चरणहि दास॥

इन सात प्रकार के गुरुओ में से कोई पालन करने वाला है, कोई खिलाने वाला है, यानी छः गुरु तो लौकिक ज्ञान देने वाले है। परन्तु सातवां गुरु सदगुरु होता है, जो सत्य का अनुभव करवाकर भव से पार लगा देता हैं।

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने रामचरित मानस में लिखा हैं-

"गुरु बिनुभव निधि तरईन कोई।
जो बिरंची शकंर सम होई।।"

अर्थात् आत्मवेता महापुरूष के बिना कोई ब्रह्मा और शंकर भगवान के समान अमर विभूति धारण कर ले तो भी इस दुस्तर संसार-सागर से तिरना नहीं होगा। अनादि, अनुपम सतस्वरूप आत्मा का ज्ञान गुरु के बिना कभी नहीं हो सकता हैं। जितने भी बड़े-बड़े अवतारी पुरूष हुये उन सब ने गुरु धारण किया है, गुरु के बिना तो भगवान को नमस्कार करते हैं, वह भी स्वीकार नहीं है।

"बिना गुरु नमस्कृत्य हरि नमस्करोतियः।
न पश्यात् हरि रतस्य मुखं चापि कदाचन।।"

अर्थात् जो गुरु को नमस्कार नहीं करते उसके मुख को भगवान भी नहीं देखना चाहते। जो गुरु के प्रसाद को पहले ग्रहण करता है और फिर भगवान के प्रसाद को

Scanned by CamScanner

लेता है तो उसको महान पुण्य प्राप्त होता है इसलिए साहिब कबीर ने कहा है–

"गुरु गोविन्द दोहू खड़े, काके लागू पाय।
बलिहारी गुरुदेव की, गोविन्द दियो मिलाय।।"

अर्थात्:– मेरे सामने गुरु ओर गोविन्द दोनों खड़े है मैं सबसे पहले किसके पॉव लगू तो मैंने निश्चय किया कि अगर गुरु देव नहीं होते तो मेरे को भगवान से कौन मिलाता, इसलिए मैं तो गुरु के चरण पकड़ता हूँ श्लोंक में आया है।

"गुरु प्रसाद महात्म्यं न वक्तुकोऽपिशक्नुयात।
व्यति क्रमेण पापास्य न संख्या विद्यते नरा।।"

अर्थात् :– श्री गुरु का महात्म्य कोई भी नहीं कह सकता है। उलटा करने से अर्थात बिना गुरु प्रसाद लिए जो भगवान का चरणोदक लेते है, उनके पापो की कोई भी संख्या नहीं कह सकते इसलिए तनम न धन से सदगुरु की सेवा करनी चाहिए।
गुरु गीता में आया हैं–

"ध्यान मूलं गुरों मूर्ति, पूजा मूलं गुरुपदं।
मन्त्र मूलं गुरुं वाक्यं मोक्षा मूलं गुरुकृपा।।"

Scanned by CamScanner

अर्थात् :- ध्यान करने योग्य केवल गुरु मूर्ति है सब पूजाओ का मूल केवल गुरु के चरणों की पूजा है सभी मंत्रो का मूल गुरु के मुखार बिन्द से निकले हुए महावाक्य है और मोक्ष का मूल कारण गुरु की कृपा है।

संत स्वामी रज्जबदासजी ने भी लिखा है "गुरु हंस के समान है, जैसे हंस दूध और जल को अलग-अलग कर देता है, वैसे ही गुरु भी देहादि असत्य है, और आत्मा सत्य है, ऐसा उपदेश करके देहात्मा की भिन्नता का विवेक कराते हुए उनकी एकता रूप भ्रान्ति को नष्ट कर देते है और गुरु शहद की मक्खी के समान है जैसे मधुमक्खी पुष्पों से शहद निकालती है पुष्प व वृक्षादि के टेडेपन आदि दोषों को नहीं देखती वैसे ही गुरु शास्त्र के भक्ति ज्ञान आदि उत्तम तत्व ही ग्रहण करते है।

गुरु चुम्बक के समान है जैसे चुम्बक की समीपता से पृथ्वी में स्थित लोहखण्ड चुम्बक की ओर खिंच आते है वैसे ही गुरु के संग से सांसारिक विषयों में आसक्त प्राणी भी गुरु की ओर खिंच आते है।

गुरु पारा के समान है जैसे पारा राख में पड़े हुये स्वर्ण के कण समूह को निकाल लेता है, वैसे ही गुरु असार संसार से शिष्यों के तन-मन को विषयों की आसक्ति से निकाल लेते है, और भगवान से जोड़ देते है।

Scanned by CamScanner

गुरु एक दाई के समान है, जैसे दाई बच्चे के अंग सुधारना रूप सुन्दर कर्म करती है, वैसे ही गुरु भी शिष्यों के कर आदि कर्मेन्द्रिय ओर चक्षु आदि ज्ञानेन्द्रिय रूप अंगो की चेष्टा को सुधार कर शास्त्र विहित तथा मर्यादित बनाते हैं।

कबीर दास जी ने लिखा है–

"गुरु धोबी शिष्य कपड़ा, साबुन सिरजन हार।
प्रेम सिला धो फटकारे, निकसे ज्योति अपार।।"

अर्थात्:– गुरु धोबी के समान है, जैसे धोबी वस्त्र की रज आदि मेल को धोकर हटाता हैं वैसे गुरु भी प्राणी के अन्त:करण रूपी कपड़ा के मल विक्षेप पाप को हटाता हैं हरि नाम रूपी साबुन लगाकर।

गुरु वैद्य के समान है, जैसे वैद्य अपनी अनुभूत औषधियों से रोगी का रोग ठीक करता है, वैसे ही गुरु भी अपने अनुभव ज्ञान द्वारा जन्म मरण रूपी रोग को मेंटता है।

गुरु मरजीवा के समान है, जैसे मरजीवा समुद्र में गोता लगाकर मोती प्राप्त करता है, वैसे ही गुरु भी समाधि अवस्था में जाकर ईश्वर का दर्शन प्राप्त करते हैं, और अपने शिष्यों को भी करवाते है।

Scanned by CamScanner

गुरु तो भृंगी के समान हैं, जैसे भृंगी अपने शब्द से कीट के तन को बदल देता है, वैसे गुरु भी जीव के मन के भावों को महावाक्य रूपी धुन सुनाकर ब्रह्म स्वरूप बना देते हैं।

इस युक्ति को विस्तार पूर्वक लिखने का प्रयास हैं।

कीट को बदलने की भृंगी की पद्धति:-

भृंगी सर्वप्रथम घरो की दिवार आदि पर मिट्टी का घर बनाता हैं फिर कीटों को खोजने जाता है। कीट मिलते है तब उनके डंक मारता हैं जो कीट डंक लगने से शिथिल हो जाता है। भृंगी उन्हें नहीं पकड़ता है और डंक लगाने से सकुचिंत हो जाता हैं, वह (भृंगी)उन्हें भी नहीं पकड़ता और जो कीट डंक लगने से भृंगी के सनमुंख खड़ा हो जाता है। अपने मुख कर देता है। उसी कीट को पकड़ कर अपने बनाये हुए घर में बंद कर देता हैं और उसे अपना शब्द सुनाता है।

उनमें जो कीट चित्त लगाकर सुनता रहता हैं वो कीट तो सुनते-सुनते भृंगी बन जाता है पर जो शब्द पर ध्यान नहीं देते वो कीट सूख कर मर जाता है।

उसी प्रकार गुरु भी अपने शिष्यों को अपने समान कर देते है। किन्तु जो सुनते ही सुनकर शिथिल हो जाते है, चित लगाकर नहीं सुनते और जो सुन सुकुंचित हो जाते

Scanned by CamScanner

है। अर्थात् ये तो विषय सुख छुड़वाते है। ऐसा विचार कर मौन हो जाते है। ये दोनों प्रकार के शिष्य नहीं बदलते किन्तु जो सुनते ही सनमुख होते है। अर्थात् सुने हुए अर्थ में संकाय रहता है, उसको पुछते है और सुनते रहते हैं। वे ब्रह्म का साक्षात्कार करके गुरु बन जाते है।

रज्जब दास जी ने कहा है:-

"गुरु तरवर अंग, डाल बहु पत्र बैन फल राम।
रज्जब छाया जे सुखी, चारव्यं सरे सु काम।।"

अर्थ:- गुरु देव विशाल वृक्ष है, उनमें गुरु पणे के बहुत गुण है, लखण है। वे ही डाले है उनके वचन ही पत्ते है और राम ही नाम है, गुरु वृक्ष की छाया में जो बैठते हैं वे सुखी रहते है और राम रूपी फल का आस्वादन करते हैं उनका मुक्ति रूपी कार्य सिद्ध होता है।

जीवात्मा ही दरिया है उसमें देह आदि जल है, ईश्वर का नाम नौका है बुद्धि ही जहाज स्तम्भ का कपड़ा है, विचार ही वायु है, उक्त जहाज से तथा उक्त विधि से प्राणी संसार सागर से पार उतरता है।

तारा, चन्द्रमा, बिजली, सूर्य, अग्नि, दीपक ये सभी असंख्य होवें तो भी निरंजन राम तो गुरु ज्ञान बिना दिखाई नहीं देता है। सम्पूर्ण पृथ्वी दीपक रूप हो जाए

Scanned by CamScanner

और सब आकाश सुर्य रूप हो जाए तो भी गुरू के ज्ञान बिना प्राणी के हृदय में तो प्रकाश नहीं होता।

प्रथम शिष्य शरीर ज्ञान-नेत्रों से हीन होने के कारण परमार्थ पथ में अंधे ही होते है। फिर श्रेष्ठ गुरु अपने ज्ञान नेत्रों से उनको ज्ञान बताते है तब परमार्थ पथ में गुरु के संग अर्थात् गुरु उपदेश के अनुसार अपनी वृतिरूपि चरणों से चलकर अर्थात् उपदेश को धारण करके अपने इष्ट देव ब्रह्म का दर्शन करते हैं।

यदि शिष्य पर सद्‌गुरु की दया दृष्टि हो तो शिष्य के दूर रहने पर भी समीप के समान वे उसका पालन करते रहते है।

उदाहरण:-(कूंज पक्षी के अण्डे का):- जिस प्रकार कूंज पक्षी हजारों मील दूर रहकर भी अण्डे का पालन अण्ड़ाकार वृति से करता रहता है।

उसी प्रकार शिष्य सद्‌गुरु की दया दृष्टि में रहे उनका हृदय कभी भी मलीन नहीं हो सकता। देखों इसमें कच्छपी के अण्ड़े का दृष्टांत प्रसिद्ध है।

कच्छवी अण्डों से दूर होते हुए भी उनकों देखती रहती है। उसकी दृष्टि मात्र से ही अण्ड़ों का पालन होता है।

Scanned by CamScanner

कच्छवी का अण्डा दृष्टि से, कूजों का वृति से, कुक्कट आदि पक्षियों के अण्डे पंखों की वायु से, पोख (पोषण) पाते है उक्त तीन प्रकार के अण्डे के समान ही गुरु के भाव से शिष्य उत्पन्न होते है।

यदि इधर उष्ण प्रदेश में कुंज पक्षी मर जाए तो वहा हिमालय पर रखे हुए अण्डे गल जाते है। वैसे ही यदि सद्गुरु अपनी वृति से शिष्य को त्यागता है तो शिष्य की भक्ति, ज्ञानादि खेती उत्पन्न नहीं होती।

प्रश्न :- कही लोग अपनी पूजा आरती करवाते सो क्या सही है?

उत्तर :- वो खुद अपनी पूजा आरती नहीं करवाते पर उनके भक्त उनकी पूजा करते उनमें चेतन परमात्मा का प्रकाट्य हुआ है इसीलिए पूजा करते सो गलत नहीं है।

साहिब कबीर ने कहा :-

"सब घट मेरा साईयाँ, सूनी सहज न कोई।
बलिहारी उन घट, की जा घट प्रकट होई।।"

जिस घट में परमात्मा का प्रकट होना लिखा हैं उन घट की सेवा से तो भगवान की सेवा होगी।

जब लोग लाख पर दीपक जलाकर और कोटि पर ध्वज चढ़ाकर, सुख का परिचय देते है। तब जिन गुरु देव में गोविन्द विराजमान है। उनकी आरती अवश्य करनी

Scanned by CamScanner

चाहिए। पूर्वकाल में यह प्रथा थी कि लखपति होने पर अपने घर की छत पर आकाशीय दीप जलाया करते थे। और करोड़ पति होने पर ध्वजा चढ़ाई रखते थें।

जब नर नृपति हो जाता है, तब उस पर श्वेत छत्र रहता है, चॅवर ढ़ोले जाते है। गुरु के हृदय में तो परमात्मा स्थित है फिर उनके नख शिखा तक के अंगों की आरती क्यों न की जाए। फिर आरती जो कर उनके नख से शिखा तब अगों को ही आरती समान जो कर अर्थात् सावधान करके गुरू सेवा में सलंग्न करना रूप आरती क्यों न की जाए?

जैसे :- राजकुमार बालक प्रधानमंत्री की गोद में हो तो उस बालक को प्यार से सभी उसे नमस्कार करते है। वैसे गुरु के हृदय में गोविन्द होने से सभी के नमस्कार के पात्र है। उन्हें प्रणति करनी चाहिए।

वेद वचन रूप पूँजी जिन कागजों में होती है, व कागज भी पूजे जाते है, तब उनके साथ भगवान है। उन गुरू देव की पूजा क्यों नहीं? गुरू की पूजा अवश्य करनी चाहिए।

जो पत्थर, काष्ठ, मिट्टी, सुवर्ण आदि धातुओं की बनी जड़ मूर्ति जिसके हृदय में हरि नाम नहीं होता, उनमें मगंल कार्य करते हुए उसमें आरती करते हैं, तब चेतन

Scanned by CamScanner

और हरि नाम चेतन से युक्त हृदय वाले सद्‌गुरु की आरती क्यों नहीं करनी चाहिए? अर्थात् अवश्य ही करनी चाहिए।

राजा जब साधारण शिला की मूर्ति बना देता है तब सब उनको प्रणाम करते हैं उसकी पुजा करते हैं फिर सद्‌गुरु तो अपने उपदेशों ब्दारा शिष्यों को ठीक करके परमात्मा से मिला देता है। वे पूजा के पात्र क्यों न होगे? सद्‌गुरु की पूजा अवश्य करनी चाहिए।

गुरु व शिष्य दोनों में अश्रद्धा भाव नहीं होने चाहिए नहीं तो बीच मझदार में डूव जाएगे।

"गुरु लोभी चेला लालची, दोनों खेले दाव।
बिच मजारे डूबसी, बैठ पत्थार की नाव।।"

(गुरु कहे मुझे सब कुछ दे दो और चेला कहे कुछ भी नहीं दूँगा। तो समझलों दोनों (गुरु व चेला) की नाव भवसागर में डूब जाएगी।

गुरु तो प्रतिष्ठा का भूखा और शिष्य विषयों का भूखा दोनों भाग्य हीन मिल जाते है। तब गुरु ब्दारा शिष्य को जो दीक्षा मिलती है सो दीक्षा होकर मानों दावाग्नि लगी है। ऐसा ज्ञात होता है, जैसे समीप जल न हो तो वन की अग्नि नहीं बुझती वैसे ही इनके मन के समीप सतोंष न होने से इनकी उक्त तृष्णा नष्ट नहीं होती, सदा तृष्णा से जलते रहते है।

Scanned by CamScanner

तृष्णा रूपी भूख से युक्त गुरु व शिष्य का मिलन वैसाख मास में बांस की डाली के घिसने के समान होता है। वैसाख में बांस की ड़ाली वायु के वेग से घिसती है, तब अग्नि प्रकट होकर बांस जल जाते है। वैसे ही गुरु शिष्य अपनी आपसी की बोल चाल ध्दारा क्रोधाग्नि प्रकट होने से जल कर मरते है।

चकमक का आघात पत्थर पर लगता है। तब किंचित् अग्नि निकलकर बहुत हो जाती है सूत से काष्ठादि को जलाता है, यह चकमक और पत्थर मिलने का महात्मय है, वैसे ही गुरु शिष्य की बातों से क्रोधाग्नि चमक आती है और दोनो के ह्रद्यों को जलाती है। यही उनके मिलन का महात्मय है। ईश्वर ऐसे गुरु शिष्य को न मिलावे।

गुरु के लक्षण गुरु में नहीं तब परब्रह्म प्राप्ति रूप व्यापार तो बनता नहीं, केवल शिक्षा ले करके पेट भरने का मार्ग खुला है।

गुरु के अन्त:करण रूपी घर में ज्ञान धन हो तो शिष्य को प्राप्त हो ओर शिष्य भी शिष्य पने के सुन्दर लक्षणों से युक्त हो जो ज्ञान धन ले सके किंतु जब दोनों ही भाग्य हीन मिल जाए तब गुरु क्या दे और शिष्य क्या ले। कहो! नारी से नारी मिले तब पुत्र कैसे होगा, वैसे ही सद्‌गुरु के बिना सभी शिष्य नपुसंको की नारियों के

Scanned by CamScanner

समान है, जैसे नपुंसक नारी के संतान नहीं होती वैसे ही सद्गुरु के बिना शिष्यों को ज्ञान नहीं होता।

बकरी के गले के स्तनों में दूध नहीं होता, वे तो देखने मात्र के ही होते है , उनको ग्वाला दुह करके पीना चाहे तो क्या पीयेगा! वैसे यदि शिष्य सम मिल जाए और गुरु आशा ब्दारा भुखा मिल जाए तो उक्त अजागल स्तन और ग्वाला की सी ही गति उनकी होगी।

स्वार्थी गुरु घर-घर जाकर दीक्षा देते है किन्तु उनके उपदेश से कोई भी शिष्य अज्ञान बन्धन से नहीं निकलता कारण गुरु और शिष्य दोनों ही सांसारिक विषयों के लोभी है। इसलिए दोनों का ही मुक्ति रूप भला नहीं होता।

गुरु ही शिष्य की रक्षा करता हैं। कोयल के अण्ड़े काक के घर में रहते है और अपने से अन्य काकों की सेवा से बड़े होते है, किन्तु कोयल उनका भाव से ही पालन करती है। और बड़े होने पर ले जाती है। वैसे ही शिष्य संसार में रहते है; किन्तु गुरु उनका भाव से पालन करते हैं। और वैराग्य हो जाने पर ले जाते हैं कोयल अपने अण्ड़े काक के आलम में छोड़ आती हैं। काक उनकों अपने जान कर पालन हैं व करते कुछ बड़े होने पर कोयल उनके पास जाकर अपनी बोली सुनाती रहती है और जब वों उड़ने लगते है तब काक न होने के समय उन्हें साथ ले जाती है।

Scanned by CamScanner

गुरु तो नि:स्वार्थी होते है। जैसे हुमा पक्षी की छाया सिर पर पड़ जाती है। वो मनुष्य राजा बन जाता है।

वह पक्षी अपने स्वार्थ के लिए किसी पर छाया नहीं पटकता। वैसे गुरु भी अपने स्वार्थ के लिए उपदेश नहीं देतें। हुमा और गुरु इन दोनों मे से कौन-सा क्या कमाता है। कुछ भी नही कमाता अत: स्वार्थ रहित है। रात्रि में जुगनू बहुत दिखाई देते है किन्तु उनसे अंधकार का नाश होकर नेत्रों को स्पष्ट वस्तु दर्षन का आनन्द नहीं मिलता। एक सूर्य के उदय होने से ही त्रिलोक का अंधकार नष्ट होकर स्पष्ट भासने लग जाता है। स्पष्टता का आनन्द प्राप्त होता हैं। वैसे ही गुरु तो बहुत मिलते है। किन्तु उनसे शिष्यों को अज्ञान नास द्वारा आनन्द नहीं मिलता वह तो सद्गुरु से ही प्राप्त होता है।

गायक तो बहुत मिलते है किन्तु दीपक राग गाने से दीपक किसी विरले से ही जलता है। वैसे ही गुरु भी बहुत मिलते है। शिष्य भी बहुत है। किन्तु शिष्य के हृदय में ज्ञान दीपक जलाने वाला कोई विरला सद्गुरु होता है। और व किसी भाग्यशाली शिष्य को मिलते है। बहुत से गुरु रूप तो पर्वत पत्थर के समान होते हैं। जैसे पर्वत के पत्थर से लोहा नहीं बदले तो वैसे ही उनसे शिष्य नहीं बदलता, किन्तु कोई विरला ही सद्गुरु पारस के समान होते है। पारस से लोहा ,सोना हो जाता है। वैसे सद्गुरु से

Scanned by CamScanner

ज्ञान द्वारा शिष्य का हृद्‌य बदल जाता है। भेद से अभेद में आ जाता है। जो उक्त रीति से शिष्य को बदल देते है। उन्हीं का यश गान किया जाता है।

गुरु शिष्य को अपने सानिध्य में रखकर उनकी सारी गलतियाँ निकाल देते है।

गुरु कुम्भकार (कुम्हार) के समान होते हैं और शिष्य कुम्भ के समान होता है जैसे कुम्भकार घड़े के चोट लगाकर उस का दोष निकालता है किन्तु पहले भीतर कपड़ा युक्त हाथ से सहायता करता है।तब बहार से थपी की चोट लगाता है वैसे ही गुरु भीतर से हित चाहते हुए ही शिष्यों को साधना कष्ट देते है।

कुम्भकार मिट्‌टी पर नाना प्रकार के आघात लगाता है किन्तु क्रोध नहीं करता। कारण कूटना, पीटना, तपना आदि कष्टप्रद व्यवहार करे बिना तो पात्र बनता ही नहीं वैसे ही गुरु क्रोध न करके ही शिष्य पर कठोर वचन और साधन कष्ट देना आदि व्यवहार करते देखे जाते है। कारण-बिना उक्त व्यवहार के शिष्य ब्रह्म का साक्षात् करने के योग्य नहीं होता है। जैसे लुहार लौह पर चोट मारते समय यह नहीं करता कि यह तो नष्ट हो जाएगा। वह तो लौह को पहले से अच्छा बनाने की भावना से ही तपा-तपा कर श्रेष्ठ बनाता है। वैसे ही गुरु शिष्य को

साधना से कष्ट देते समय यह शंका नहीं करते कि इसको हानि होगी वे तो दया पूर्वक वचन बाण मारते है। और ज्ञानोग्नि से तपा-तपा कर ब्रह्म निष्ठ बना देते है।

स्वर्णकार चाँदी के मेल को निकालने के लिए उसमें शीशा डालते है। शीशा चॉदी के कलंक रूपी मेल को निकाल लाता है इस प्रकार सोनी की हाट पर जाकर चाँदी निर्मूल होती है, वैसे ही शिष्य का मन सद्गुरु के उपदेश से निर्मल होता है। सद्गुरु के शब्द मन के कलंक रूपी मेल को निकाल देते है।

मणि समुह छेद करे बिना कंठ में नहीं बांधा जाता वैसे ही साधना संकट सहन करे बिना गुरुओं की ज्ञान गाँठ में मन भली प्रकार नहीं बधंता। अतः शिष्य साधन संकट से ही श्रेष्ठ बनता है।

जैसे - अनल पक्षी हाथियों को लेकर आकाश मार्ग से उड़ता है। तब हाथियों का पक्षी रूप स्थान छुट जाता है, वैसे ही पंच तत्व रूप पंच ज्ञानेन्द्रियों और मन की सद्गुरु उपदेश द्धारा उठाकर ब्रह्म में ले जाते है। तब उसका माया रूप स्थान छूट जाता है। अनल पक्षी का परिचय अनल पक्षी आकाश में रहता अण्डा देता हैं। तब अण्ड़ा पृथ्वी पर आता है। उस अण्ड़े से जन्मा हुआ बच्चा खाने के लिए कुछ हाथियों को अपने पंजों में पकड़ कर पुनः आकाश को चला जाता है।

Scanned by CamScanner

जो शिष्य गुरु के वचन पर विश्वास नहीं करता, व बहुत उपदेश करने के बाद भी एक भी शब्द नहीं समझ पाता है तो वो शिष्य खाली ही रह जाता है।

दोहा

"सद्गुरु बहुत समझायो, शब्द लाग्यो नहीं अंग।
रितो रहग्योर सिदड़ा, सदा तेल के संग ।।"

अर्थ:- जिस प्रकार से पहले जो लोग एक नगर से दूसरे नगर तक सूचना पहुँचाने के लिए एक सदेंश वाहक होते थे। जो सदेंश देने के लिए रात्री भर भी चलकर सदेंश पहुचाते थे। अत: उन्हें रात्री में मार्ग में प्रकाश कि जरूरत होती थी तो वे अपने पास सिदड़ा में तेल लेकर चिराग जलाकर जाया करते थे जिससे कि सिदड़ा का तेल चिराग में ही सम्पूर्ण हो जाता था। और सिदड़ा खाली का खाली ही रह जाता था। उसी प्रकार से साखी में बात आई है कि ऐसे गुरु द्वारा बहुत से शब्दों का ज्ञान कराए जाने के बाद भी शिष्य उन शब्दों को धारण नहीं कर पाता है वे इधर का सून उधर को निकाल देता है। जिससे वह शिष्य खाली ही रह जाता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा कि:-

Scanned by CamScanner

"फूले फरई न बेंत, जदपि सुधा वरषहिं जलद।
मुरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि समद॥"

अर्थः- वे शिष्य केवल बेंत के वृक्ष के समान ही है जो चाहें बादल अमृत ही क्यों न बरसाए, मगर बेंत के वृक्ष के कोई फल व फूल नहीं लगते, उसी प्रकार गुरु के रूप में ब्रह्माजी ही क्यों नहीं मिल जाए, ऐसे मूर्ख शिष्य के हृदय में ज्ञान का संचार नहीं होता।

"बीनी थी लागी नहीं, बास नली में फूक।
गुरु विचारा क्या करे, चेला मही चूक॥"

अर्थः- खुद शिष्य ही चूक जाता है। उसका गुरु विचार करके भी क्या करे। जिस प्रकार से पत्थर पर बरसात का कोई उपयोग नहीं होता। उसी प्रकार ब्रह्मानन्दजी महाराज ने भजन में कहा है:-

"कि बोध नहीं अपने आपका, गुरु ज्ञान क्या करे।
निज स्वरूप को जाना नहीं, तो वेद पुराण क्या करे॥"

गुरु का क्या कर्त्तव्य है:-

"माडूक्य" उपनिषद में लिखा है कि ज्ञानी गुरु उस श्रद्धा पूर्वक, शांत, चित्त एवं तितिक्षा ओर साधना

Scanned by CamScanner

निष्ठशिष्य को ब्रह्म विद्या का उपदेश करे जिससे वह अविनाशी सत्स्वरूप आत्मा को जान ले।

"तस्मैस विद्वानुपसन्नाय सम्यक प्रशान्त चिन्नाय शमान्वितायl
येनाक्षरं पुरूषं वेदसत्यं प्रोताय तां तत्वतो ब्ल विद्याम्॥"

"विवेक चुड़ामणी" में भी आया है:- शरणागति की इच्छा वाले उस मुमुक्षु, आज्ञाकारी, शान्तचित्त, समाधि सयुंक्त सांधु शिष्य को गुरु कृपा 'इस प्रकार' तत्वोपदेश करें-

"विद्वान्स तस्मा उपसत्तिमीयुरो,
मुमुक्षवे साधु यथोक्त कारिणे।
प्रशान्त चिताय शमान्वितताय, तत्वोपदेशं कृपयैव कुर्यात्॥"

अन्यत्र भी आया हैं:-

जो अपने आत्मीयजन को भगवद्भक्ति का उपदेश देकर उसके सामने खड़ी हुई मृत्यु से उसे छुटकारा नहीं दिला सकता, वह गुरु नहीं स्वजन नहीं, पिता नहीं, माता नहीं, इष्ट देव नहीं, ओर स्वामी भी नहीं है।

दोहा

"गुरुर्नसस्यात्स्वजनों न सस्यात् पिता न सस्याज्जननी न सास्यात्।
दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद् य:समुपेतमृत्युम।"

"हरहि शिष्य धन शोक न हरई।
सो गुरु घोर नरक महं परई।।"

अर्थ:- जो गुरु शिष्य का धन झड़प लेता है ओर उसकी मुसीबत को दूर नहीं करता, ऐसा गुरु घोर नरक में पड़ता है। इसलिए गुरु का कर्त्तव्य है, कि वह शिष्य को जन्म मरण का हेतू अविधा की निवृति का हेतु आत्मज्ञान देकर जन्म मरण से मुक्त करे, यही गुरु का कर्तृव्य है। इस प्रकार से शरण में आये हुए शिष्य को धीरज बधांवे-

गुरु ने कहा:- हे विद्धान ! तू डर मत, तेरा नाश नहीं होगा। संसार सागर से तरने का उपाय है। जिस मार्ग से यतिजन इसके पार गए है। वहीं मार्ग मैं तुझे दिखाता हूँ।

"माभैष्ट विंद्धस्तवनास्त्यपाय:संसार,
सिन्धोस्तरणेऽस्त्युपाय:।
येनैव याता यतयोऽस्य पारं, तमेव मार्गं तव निर्दिशामि।।"

शिष्य का कर्त्तव्य

गीता के चौथे अध्याय के 34वें श्लोक में बताया:-

दोहा

"तद्विद्धि प्राणिपातेन, परि प्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ,ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन:।।"

अर्थः- हे अर्जुन तु उन ब्रह्मनिष्ठ व श्रोत्रिय महापुरूषों की विधि विधान से सेवा कर और सेवा से प्रसन्नचित हो जावे तब तू प्रश्न करना है। गुरूदेव मैं कौन हूँ?और कहाँ से आया हूँ। और कहाँ जाऊंगा ?इत्यादि प्रश्न करने पर तेरे प्रति वे महापुरूष इस तत्वज्ञान को कहेगें। जिसको जानकर तू मुक्त हो जायेगा। इसलिए गुरु की हर प्रकार से सेवा करनी चाहिए ताकि गुरु देव प्रसन्न हो जावे तो अपना कल्याण सहज हो जाये।

श्लोक

''यस्य देवे पर भक्तार्यथा तथा गुरौ।
तष्य हू योते कथि तार्था प्रकाशते महात्मनः।।''

अर्थः- जैसी श्रद्धा भक्ति परमात्मा में है वैसी गुरु देव में होनी चाहिए। ऐसी भावना से शिष्य के हृदय में ज्ञान का प्रकाश होगा। जिस प्रकाश के होने से आत्मा आनन्द मग्न हो जायेगा।

सेवा करने योग्य गुरु केवल ब्रह्मनिष्ठ व श्रोत्रय है। केवल भेष बनाने वाला गुरु धारण करने योग्य नहीं पाखण्डी गुरु तो स्वंय खड्डे में गिरते है और दूसरों को भी गिराते है। ऐसे पाखण्डी गुरुओं के चक्कर में कभी नहीं आना चाहिए।

Scanned by CamScanner

श्लोक

"यथा कूर्मः स्वतनयान्ध्यान मार्गेण पोषयेत्।
वद्यं दीक्षोपदशास्तु मानसः स्पत्तशाविधः।।"

अर्थः- जिस प्रकार मादा कछुआ केवल ध्यान मात्र से अपने अण्ड़ों का पोषण करती है। उसी प्रकार सच्चे गुरु भी शिष्य को हृदय से दीक्षा देते है।

श्लोक

"न पादुकापरो मंत्रो न देवः श्री गुरोः परः।
न हि शालीत् पर दीक्षा न पुण्य कुल पूजनात्।।"

अर्थः- पादुका से परे कोई भी मंत्र नहीं है। श्री गुरु से परे कोई देव नहीं है। शक्ति दीक्षा से उत्तम कोई दीक्षा नहीं है। और कुल पूजन से परे कोई पुण्य नहीं है।

श्लोक

"गुरु मूलाः क्रियासर्वालोकेऽस्मिन कुदनायिके।
तस्मात् सेव्यो गुरुर्नित्यं सिद्धंभक्ति संयुते।।"

अर्थः- उपासना की समस्त क्रियाएं गुरुमूल से होती है। अर्शात् गुरु के व्दारा सही उपासना की पद्धति का ज्ञान होता है। अतः एव है कुलनायिके! सिद्धि प्राप्त

Scanned by CamScanner

करने के लिए भक्ति युक्त होकर मनुष्यों को गुरु की नित्य सेवा करनी चाहिए।

श्लोक

"तावद्धार्शिर्नर्भिय शोकोलोभमोह भ्रयाद्वय:।
यावन्ना याति शरणं श्री गुरु भक्तावत् सलभा।।
तावद्व भ्रमानी संसारे सर्व दुःख मलीभसा:।
न भवते सद्गुरौ भक्तियावि छेवोरी देहिताम्।।"

अर्थ:- इस संसार में आतिजन्य भय होता है तथा शोक, लोभ, मोह और भ्रम आदि होते है। जब तक मनुष्य मनुष्य श्री गुरु चरण की शरणागति में नहीं आता, तब तक भक्तों पर भक्तवत्सल गुरू की कृपा और कल्याण नहीं होता। हे देवेशि! इस संसार में समरूप प्रकार के दुखों का भय तभी तक देह धारियों को घेरे रहता है और उन्हें भरमाता रहता है जब तक सद्गुरु में पूर्ण भक्ति भाव नहीं उत्पन्न होता।

श्लोक

"तावद्वाराधयोच्छ्ष्य: प्रसन्नोऽसीयद्वा भवेत्।
गुरौ प्रसन्ने शिष्यस्य सद्य: पापक्षयोभवेत्।।"

अर्थ:- शिष्य को अपने गुरु की सच्ची आराधना तब तक करनी चाहिए जब तक श्री गुरुचरण

Scanned by CamScanner

प्रसन्न न हो। जब गुरु प्रसन्न हो जाते है तो फिर शिष्य के पापों का क्षय हो जाता है।

श्लोक

" ब्रह्मा विष्णु महेशादि देवता मुनियोगिनः।
कुर्वन्त्यनुग्रहं तुष्टा गुरौ तुष्टे न संशयः।।"

अर्थः- जब गुरुवर पूर्णतया संतुष्ट एवं प्रसन्न हो जाते है तो एक मात्र गुरु की प्रसन्नता होने पर ब्रह्मा, विष्णु तथा महेशादि देवता, मुनि और योगीजन सभी उस गुरु पर अनुग्रह करते है, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

श्लोक

"जन्म हेतुहि पितरौ, पूजनीयौ प्रयत्नतः।
गुरुर्विशेषतः पूज्यो धर्माधर्म प्रदर्शकः।।"

अर्थः- देहधारी माता-पिता जन्म देने के कारण पूजा के योग्य होते है और प्रयत्नपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए। लेकिन गुरु उनसे भी अधिक पूज्य होते है। क्योंकि वे धर्म-अधर्म के सही ज्ञान का प्रदर्शन कराते है।

Scanned by CamScanner

श्लोक

"गुरोर्हितं हि कर्त्तव्य , मनोवाक्कायकर्मभिः।
अहिता चरणाद्देवि , विष्ठायांजायते क्रिमिः।।
शरीर विच प्राणश्चय ,श्री गुरु वचनजयन्तिये।
क्रिमिकीटपतगड्.व ,प्रासुवन्ति न संशययीः।।"

अर्थः- अपने गुरु का हित मन, वाणी और शरीर के कर्मो द्वारा पूर्ण रूप से करना चाहिए। हे देवी! यदि कोई शिष्य किसी भी समय गुरु का अहित करने का आचरण करता है तो वह विष्ठा का कीड़ा बनकर नरक की यातना भोगता है। यदि कोई शिष्य शरीर, धन और प्राणों द्वारा अपने गुरु के वचन की अवेहलना करता है तो वह कृमि, कीट और पतंगत्व को प्राप्त होता है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

रामायण में इस प्रकार से प्रमाण आयाः-

काक भुशण्डजी ने अपने जीवन के साथ घटी हुई घटना का प्रसंग बताते है।

एक बार जब मैं शिव मन्दिर में बैठा हुआ शिव नाम जप रहा था, तब गुरुजी मन्दिर में आये तो मैंने अहंकार वस प्रणाम नहीं किया। जिससे मेरे गुरुजी शिव मन्दिर में जप करते हुए देखकर गुरुजी तो प्रसन्न हो रहे थे बल्कि शिव जी इस अपमान को सहन नहीं कर पाये

Scanned by CamScanner

और मुझे श्राप दे दिया, कि जा तेरा गुरु आने पर भी तुने नमस्कार नहीं किया। इसलिए तू अजगर हो जा, ऐसी आकाश वाणी सुनकर मेरे गुरुजी बहुत दुःखी हुए और उन्होंने भगवान शिव से प्रार्थना कि जिससे कि भगवान प्रसन्न हो गये। भगवान प्रसन्न होकर कहे कि है विप्र तुम क्या मांगना चाहते हो तब मेरे गुरुजी ने प्रथम वरदान में कहा की आपकी भक्ति सदैव मेरे हृदय में निवास करे। व दुसरे वरदान में यूं मांगा कि यह तो बेचारा अविद्या मोह, माया में ग्रसित है, यह तो निति-अनिति, धर्म-अधर्म कुछ भी नहीं जानता है, व इसे किसी प्रकार की विधि का मालूम नही है। इसलिए इस मेरे अज्ञानी शिष्य को क्षमा करे। ओर आप के द्धारा दिए हुए श्राप से भी मुक्त करे। पुन: आकाश वाणी हुई कि मेरा कहा हुआ वचन असत्य नहीं हो सकता। एक हजार जन्म तो इसे लेना ही होगा। पर जन्म-मरण में होने वाला कष्ट इसे नहीं होगा। प्रत्येक जन्म में इसे राम भक्ति प्राप्त होगी। एक दभं के कारण शिष्य ने गुरु को प्रणाम नहीं करने के कारण नाना प्रकार की योनियों में भटकना पड़ा।

जिस प्रकार से हाथी का स्नान करके धुल को अपने सिर पर उछालना।

श्रीमद् भागवतगीता स्कंध 7 अन:15वॉ में लिखा है।

Scanned by CamScanner

श्लोक

"यस्य साक्षाद् भगवतिज्ञान दीप प्रदे गुरौ।
मर्त्या सद्धी तष्या सर्व कुंज्जर शोचवत्।।"

अर्थः- ऐसे ज्ञान का दीपक जलाने वाला गुरु तो मानो साक्षात् भगवान ही है जो नर ऐसे सच्चे गुरु को पाकर गुरु की निन्दा करता उसके बारे में कहा गया है।

कुण्डली

"विद्या पा सद्गुरुदेव से, सोहो जावे फिर दूर।
दु:ख पावे भव माही, बणसी कूकर सूर।।
बणसी कूकर सूर, ऐसी नीच गति पावै।
लख चौरासी माहि, फिर-फिर गोता खावै।।
ज्ञानानन्द कृतघ्न बुरा, समझ महा क्रूर।
विद्या पा सद् गुरुदेव से, हो जावे फिर दूर।।"

अर्थः- ऐसे सच्चे गुरु को पाकर जो नर गुरु की निन्दा करता है। अथवा कानों से श्रवण करता है। अथवा विद्या सीख कर मुकर जाता है। और श्री गुरुदेव का अपमान करता है उसे बड़ा पाप लगता है।

मनुस्मृति में आया है:-

श्लोक

"परिवादात् खरौ भवति, श्वानै भवति निन्दकः।
परिभोक्ता कर्मी भवति, कीटो भवति मतश्वरीः।।"

अर्थ: – श्री गुरु से अभिमान करके अपने आपको बड़ा मानता है वो जीव गधे की योनि पाता है। और जो गुरु की निन्दा करता है अथवा सुनता है वे कुत्ते की योनि को पाता है। जो गुरु देव के धन को भोक्ता है। वह सर्प, बिच्छु की योनि को भोक्ता है। और गुरुदेव की बड़ाई सुनकर जलता है। वह मांसहारी जानवरों की योनि पाता है। इसलिए शिष्य को चाहिए की वह मर्यादा में रहकर नियम से ऐसी रहणी व करणी में जीवन जिये ताकि परलोक सुधर जाये। परलोक मार्ग आस्तिक एक ही अक्षर का उपदेश करता है तो उस गुरु के ऋण को पूरी पृथ्वी को दान में दे दिया जाये तो भी उऋण नहीं हो सकता। शास्त्रकारों ने कहा है कि जो गुरु के सम्मुख होकर भजन करता है तो उसका भजन सफल होता है। पर जो गुरु विमुख होकर जो भजन करता है। उसको सप्त ग्राम मारने के बराबर पाप लगता है। श्री गुरु विमुख प्राणी का दर्शन योग्य नहीं है। जो गृहस्थ गुरु से विमुख है वो चांडाल के समान है। जैसे मदिरा के बर्तन में गंगाजल अपवित्र हो जाता है। उसी प्रकार गुरु विमुख इन्सान के हाथ का धूप, दीप, निवेद्य, पुष्प व दान देवता भी नहीं लेते है। उसके सर्व कर्म निष्फल है। इसलिए शिष्य को कर्त्तव्य कर्म का पालन करना है। सो इस प्रकार है :-

Scanned by CamScanner

शरीर, वाणी, बुद्धि, इन्द्रियां और मन इन सबको रोक कर हाथ जोड़कर गुरु के सामने सदा साधारण अन्न, वस्त्र और वेश से रहे तथा गुरू से पहले उठे और पीछे सोये शिष्य को चाहिए कि बैठे हुए गुरु के सामने जाकर अपनी और आते हुए कुछ पग आगे जाकर देखते हुए से पीछे दोड़कर बातचित करें। गुरु के समीप शिष्य शय्या और आसन सदा नीचा ही रखना चाहिए। अगर आंखों के सामने शिष्य को मन चाहे आसन पर नहीं बैठना चाहिए। गुरुदेव की देखा देखी नहीं करे, गुरु कहे जो करे इस पर एक दृष्टान्त है:-

एक महात्मा जी थे उनका एक शिष्य था। महात्मा ने अपने शिष्य से कहा कि अपने मन माने ढंग से कार्य मत करना। मैं जो करू वो मत करना और जौ मैं कहूँ वो ही करना। शिष्य कुछ दिनों तक गुरुजी की सेवा में रहा कुछ दिन पश्चात् वह अपने नगर गया और सोचने लगा कि गुरुजी को तो सारी दुनिया मानती है। और अपने को तो कोई नहीं मानता है। गुरुजी को दुनिया इसलिए मानती थी कि उनको फोड़े-फुन्सी को मुक्की की देकर ठीक करना आता था। उस शिष्य ने सोचा कि मेरे को भी यह काम करना चाहिए। उसने भी यह काम करना शुरू कर दिया। एक दिन गॉव में एक बुढ़िया के गले में एक फोड़ा हो रहा था। वह उसको ठीक करने चला गया। वहा जाकर उसने

Scanned by CamScanner

उस बुढ़िया के गले में जोर से मुक्का मारा तो वह बुढ़िया मर गई। बुढ़ियां के मरते ही गॉव वालों ने सोचा कि यह बुढ़ी औरत थी मर गई तो कोई बात नहीं है। इस कारण गाँव वालों ने उसे कुछ भी नहीं कहा और वह वहा से चला गया। उस गॉव से निकलकर वह दुसरे गॉव में चला गया और कहने लगा कि किसी के फोड़ा–फुन्सी हो तो उसको ठीक करवा लो। संयोग से उस गाँव में एक जवान लड़के के गले में एक फोड़ा हो रहा था। वह शिष्य फोड़ा तो ठीक करना नहीं जानता था। उसने उस बुढ़िया की तरह उस लड़के के गले में जोर से एक मुक्का मारा तो वह लड़का थोड़ी देर में छट पटाकर मर गया। यह सब दृश्य देखकर गॉव वालो से रहा नहीं गया और उन्होंने उस शिष्य को पकड़कर राजा के पास ले गये और न्याय करने की फरियाद करने लगे राजा ने उस शिष्य को मृत्युदंड की सजा सुना दी। लेकिन उसको उसके गुरुजी की एक बात याद आ गई कि बेटे तेंरे से कोई गलत कार्य हो जाये या कोई विपदा आ जाये तो मुझे जरूर याद कर लेना। सजा देते समय शिष्य को पुछा गया कि बता तेरी अन्तिम इच्छा क्या है तो शिष्य ने कहा कि मुझे मेंरे गुरु देव से मिलवा दो। राजा ने शिष्य के गुरु को बुलाया। गुरुदेव के आते ही शिष्य गुरु के चरणों में गिर गया और कहने लगा कि गुरुजी मेंरे से गलती हो गई मुझे आप इस मुसीबत से

Scanned by CamScanner

निजात दिलाओं तो गुरुजी ने शिष्य से कहा कि बेटा चल ठीक है। अब मैं जैसा कहता हूँ। तुम वैसा करना , शिष्य ने कहा कि ठीक है। गुरु देव यह कहकर गुरु और शिष्य दोनों आपस में झगड़ने लगे उनका झगड़ा देखकर राजा ने कहा कि क्या बात हैं क्यो झगड़ा कर रहे हो तब गुरुजी ने कहा कि राजा बात ऐसी है कि आज के दिन जिसे फांसी लगेगी वह स्वर्ग का राजा बनेगा इसलिए मैं मेरे शिष्य से कह रहा हूॅ कि फांसी मुझे लग जाने दो और शिष्य कह रहा है कि नहीं फांसी मुझे लग जाने दो यह मेरे से पहले स्वर्ग का राजा बनना चाहता है। यह बात सुनते ही राजा बोलता है कि फांसी तुम्हारे बाप की है क्या, यह कह कर वह अपने सेवकों से कहता हैं कि इस शिष्य को इस फांसी से हटाओं और यह फांसी मेरे लगाओं। इस प्रकार राजा फांसी पर लटकर मर गया और गुरु व शिष्य अपने गन्तव्य पर चले गये।

ऐसे ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु कितने दयालु होते है। शिष्य ने कितने अवगुण किये उसके बावजूद भी गुरु ने उस पर अनुग्रह किया और मृत्यु के मुखार बिन्द से बचा लिया। इसलिए शिष्य का कर्त्तव्य बनता है कि सदैव गुरु परब्रह्म पर दृष्टि ही रखे कभी भी दोष दृष्टि न ड़ाले। गुरु से ज्ञान लेकर मुकर जाता है। तो उसकी किस प्रकार दुर्गती होती है।

Scanned by CamScanner

इस पर एक दृष्टांत :-

एक ग्वाला रोजाना नदी के किनारे गायों को चराने जाया करता था। तो उसने नदी में एक पक्षी को देखा तो वह पक्षी जल में से मछली को उठाकर ऊपर आसमान की तरफ फेंककर अपने मुंह में झेल लेता, इस पक्षी की क्रिया को देखकर ग्वाले ने भी इस प्रकार करने का प्रयास किया और वह अपनी लकड़ी को आसमान में फेंकने व अपने मुँह में झेल लेता ऐसा करते-करते अभ्यास हो जाने के कारण वह एक दिन लोहे के भाले को भी अपने मुँह से झेलने लग गया। जिसके कारण वह अपने करतब को गाँवों व शहरों में दिखाने लगा। जिससे उसे धन भी मिलने लग गया। फिर एक दिन उस ग्वाले को किसी गॉव में एक ऐसा व्यक्ति मिला तो उस व्यक्ति ने ग्वाले से पूछा कि तूने यह कला/विद्या कहॉ से प्राप्त कि और तेरा गुरु कौन है तो उस ग्वाले ने स्पष्ट कहां कि मेरा कोई गुरु नहीं है और मैं ही इस विद्या को अपने आप ही सीखा है। तो उस व्यक्ति ने कहा कि यह करतब फिर से दिखाओं तो ग्वाले ने फिर से दिखाया तो वह लोहे का भाला उसके गले से पार हो गया जिसके कारण उस ग्वाले कि मृत्यु हो गई। इससे यह स्पष्ट होता है कि कभी भी व्यक्ति को गुरु से विद्या पाकर व्यक्ति को कृतध्नी नहीं बनना चाहिए। कृतज्ञ ही रहना चाहिए एवं गुरु महिमा का ही बखान करना

Scanned by CamScanner

चाहिए। और गुरु द्वारा कहे हुए वचनों में बिलकुल भी संशय नहीं करना चाहिए। और जो इंसान गुरु के कहे वचनों में संशय करता है। वो दु:खी ही रहता व कभी सफल नहीं हो पाता।

इस दृष्टांत का सार है:-

एक वैश्य/बनियाँ ने अपने प्रदेश के प्रधान संत से कहा मुझे शीघ्र से शीघ्र ईश्वर प्राप्ति का उपाय बताओ। संत बता तो देगे किन्तु कर नहीं सकेगा। बनियाँ मैं अवश्य करूंगा, आप तो बतावें। संत निर्जन वन में जाकर वहा के पीपल वृक्ष के नीचे चिता चुनकर अग्नि लगा देना फिर पीपल पर चढ़कर उस अग्नि में कूद जाना। अग्नि में पड़ने से ही ईश्वर तुझे झेल लेंगे। उसने वन में जाकर वैसा ही किया और पीपल पर चढ़कर सोचने लगा साधु ने मजाक में कह दिया है। अग्नि में कूदने से शरीर ही भस्म होगा। ईश्वर कैसे मिल सकेगा? नीचे उतर आया फिर सोचा साधु तो अच्छे है, वे मिथ्या तो नहीं बोलते। फिर चढ़ा और पूर्ववत विचार करके उतर आया। एक चोर राजमहल में चोरी करके धन लाया था। उसने इससे उतरने-चढ़ने का कारण पूछा। बनियाँ ने अपनी उक्त कथा सुना दी। चोर ने सोचा संत तो सत्य बोलते है। मेरे पीछे राजपुरूष लगे है। वे मुझे पकड़ कर मारेंगे भी और धन भी छीन लेगें तथा जेल में भी डालेगें। अत: क्यो न धन देकर संत वचन ले लूं फिर

चोर ने धन देकर संत वचन ले लिया। बनियां भी प्रसन्न हो गया । इतने में राजपुरूष आ गये। वैश्य/बनियां के पास धन मिलने से उसे पीटा। धन भी छीन लिया और जेल में भी डाल दिया। चोर पीपल पर चढ़ कर अग्नि पर कूदा कि बीच में ही भगवान ने झेल लिया और चतुर्भुज रूप का दर्शन देकर कृतार्थ कर दिया। उक्त कथा से सिद्ध होता है कि जो गुरु वचनों को सत्य नहीं मानता सो अपने कुल में कल्पश (पाप) रूप ही होता है। देखो संशय करके उक्त बनियां साहूकार था किन्तु चोर हो गया। चोर ने सत्य माना तो भगवान को प्राप्त हो गया। इसलिए गुरु के प्रति अपने आप की कुर्बानी देने कि क्षमता शिष्य में होनी चाहिए।

दृष्टांत:- महाराज रामदासजी के 750 शिष्य थे, ये महाराज की सेवा किया करते थें। महाराज के शिष्यों में शिवा को लेकर संशय पैदा हो गया। कि महाराज तो हमेशा शिवा, शिवा ही पुकारते है। इससे शिष्यों में ईर्ष्या कि भावना पैदा हो गई। और अपने गुरु के प्रति ऊँच-नीच और अमीर-गरीब की भावना प्रकट होने लगी। इस सारी वार्ता का पता जब महाराज जी को चला तो महाराज ने शिष्यों में पैदा हुए संशय को मिटाने के लिए उन्होंने अपनी जाँघ पर एक आम बाधाकर सो गये और प्रात:काल जोर-जोर से चिल्लाने लगे और आवाज सुनकर सभी शिष्य एकत्रित हो गए। और सभी शिष्यों ने आकर महाराज

Scanned by CamScanner

जी से पूछा कि रात ही रात में आपके ऐसी कौनसी बिमारी हो गई जिसके दर्द के मारे आप चिल्ला रहे हो। तब महाराज ने कहा कि रात ही रात एक ऐसा फोड़ा निकला है कि जिसके दर्द के कारण मेरी मृत्यु ही निश्चित जान पड़ रही है। अत: इसका उपाय तुरन्त: ही करना चाहिए। तब एक शिष्य ने कहा महाराज इसका क्या उपाय है? तब महाराज ने उस फोड़े का उपाय बताया कि कोई भी शिष्य अपने मुँह से इस फोड़े को पूरा का पूरा चूस ले तो ही मेरी रक्षा हो सकती अर्थात् मैं बच सकता हूँ। और यदि वह पूरी तरह नहीं चूस सका तो उसकी मृत्यु हो जाएगी। ऐसा सुनते ही सभी शिष्य आश्रम छोड़कर नौ दो ग्यारह हो गये। इसकी सुचना शिवा को लगी है तो वह वहा से इस प्रकार दौड़ा कि उसके शरीर पर पहने हुए कपड़ो व पैरो की जुतियों का भी पता न रहा और वह बहुत उतावले से आश्रम की तरफ दौड़ा वहा पहुॅचने पर शिवा को बताया कि तुम तो परिवार वाले हो इसलिए इस प्रकरण से दूर रहो। शिष्यों ने शिवा से कहा कि यह फौड़ा बहुत खतरनाक है तुम मर जावोगें। तब शिवा ने उनसे कहा कि मेरे मर जाने से तो बहुत से शिवा मेरे गुरु पैदा कर देगे परन्तु गुरु के मर जाने पर हम सब मिल कर भी एक शिवा पैदा नहीं कर सकते इसलिए में अपने प्राणों की परवाह नहीं करता हूँ और गुरु की शरण में जाकर कहने लगा कि यह क्या हो गया है, तब गुरु ने शिवा से कहा कि रातों रात ऐसा फौड़ा हुआ है, कि मुझे

Scanned by CamScanner

जीवित देखना चाहते हो तो इस फौड़े को इस प्रकार चुसना कि मेरी सारी पीड़ा दूर हो जाए ,ऐसा कहते ही शिवा तुरन्त ही चुसने लगा और चुसता हुआ मन ही मन में विचार करने लगा कि इस प्रकार का फौड़ा मेरे गुरु जी को रोजाना ही निकला करे जिससे मेरे गुरु के पैर से लिया हुआ चरणामृत मेरे गुरु रसावसन का आनन्द की प्राप्ति हुई इस प्रकार गुरु का रसावसन का लाभ मुझे हमेशा ही मिलता रहे। ऐसा भाव अगर शिष्य में हो तो उसका कल्याण होने में कतई संशय नहीं है। गुरु के प्रतिशिष्यों को सदैव ही श्रद्धा दृष्टि बनाए रखनी चाहिए। श्रद्धा से परम लाभ की प्राप्ति होती है।

दृष्टांत:- चार ढ़ोगी साधुओ ने राजा के घर चोरी करने का मानस बनाया और राजमहल में पहूँच गये। राजा व रानी ने उनका बड़ा आदर सत्कार किया, और उनसे दस-पन्द्रह दिन ढ़ोगी साधुओं ने राजा के यहाँ दरबार में खुब मौज ली, एक दिन राजा शिकार को निकल जाता हैं। व पिछे से ढ़ोगी साधुओं ने मौका देखकर मन में विचार किया कि आज अच्छा मौका है। ऐसा अवसर पाकर ढ़ोगी साधुओं ने रानी को ठगनें का विचार किया और रानी से कहने लगे कि आज हमारी इच्छा है कि आज हम यहाँ से जाना चाहते है। आपको जो भी दान -दक्षिणा देनी हो दे दो, रानी ने श्राप का भय मानकर उन्हें आभूषण, हीरे,

Scanned by CamScanner

मोती आदि दे दी, जिससे भी ढ़ोगी साधुओं कि इच्छा पूरी नहीं हुई और साधुओं ने उस रानी कि हत्या कर दी और राजमहल का सारा खजाना लूट कर ले जा रहे थे कि मार्ग में साधुओं कि भेंट राजा से हो गई। तो राजा ने कहा कि आप कहा जा रहे हो तब ढ़ोगी साधुओं ने कहा कि रानी ने तो हमें विदा कर दिया है, इसलिये हम जा रहे हैं तब राजा ने कहा कि , आप वापस राजमहल में चलीए आपको मैं स्वंय विदा करूँगा। और राजप्रसाद में ले जाकर यथो उचित आसनों पर बैठाया और जोंही राजा महल में अन्दर पहुचा तो उसें रानी का कटा हुआ सिर दिखाई दिया, तब राजा के मन में अनेक प्रकार के विचार उठने लगे और राजा यह सब कैसे हुआ, कब हुआ, किस कारण हुआ। इस तरह विलाप करने लगा, और मामले को उजागर होता देखकर साधुओं ने भयभीत होकर राजा से सारा वृतांत कह दिया, और अपराध कबूल कर लिया, लेकिन फिर भी राजा को इस बात का विश्वास नहीं हुआ, और राजा कहने लगा कि मैंने ड़ाकुओं कि सेवा नहीं की है। मैंने तो साधु संतों कि सेवा कि है। इसलिए में इस बात को स्वीकार नहीं करता फिर राजा ने जल से भरी झारी मँगवाई व चारों साधुओं के चरण धोए और उस चरणामृत को लेकर ज्योंहि रानी के पड़े शव पर छिड़काऊ मारता है तो शव वह जीवित हो

जाता है जीवित शव को देखकर साधुओं को आश्चर्य होता है।

इस प्रकार से राजा का भाव गुरु के प्रति कितना अगाद है उसकों देखकर ढ़ोगी साधुओं के स्वभाव में बदलाव आ गया। और गुरु के प्रति श्रद्धाभाव जाग्रत हो गया और गुरु पर श्रद्धा का विश्वास हुआ वह भी सच्चे संत बन गये।

तीन प्रकार के शिष्य हुआ करते है :-

1. उत्तम अधिकरी। 2. मध्यम अधिकारी।

3. कनिष्ठ अधिकारी।

1. उत्तम अधिकारी की परिभाषा:- मल-विक्षेप नहीं हो, चार साधान सम्पन्न हो(विवेक,वैराग्य, षष्ठ सम्पति,मुमुक्षता) वो ही उत्तम अधिकरी है,वो ही गुरु के मुखारबिन्द से महावाक्यों का अर्थ सहित श्रवण कर सकता है।

2. मध्यम अधिकारी की परिभाषा:- मल-विक्षेप पूर्ण रूप से धुले हुए नहीं होते व चारों साधन भी पूर्ण नहीं होते, वह मध्यम अधिकारी है, वह उपासना का अधिकारी है।

3. कनिष्ठ अधिकारी की परिभाषा:- मल-विक्षेप ज्यों के त्यों रहते हो ,चारो साधन सम्पन्न नहीं होता हो, वो कनिष्ठ अधिकारी है। वो तो निष्काम रूप सेवा करें। इस प्रकार से गुरु की सेवा तो तीनों अधिकारीयों को ही करनी चाहिए तीन चीजे आजीवन सेवनीय है(सत्संग,

Scanned by CamScanner

स्वाध्याय,सद्गुरु)गुरु की चार प्रकार से सेवा होती सो शिष्य को करनी चाहिए(तन सेवा,मन सेवा,धन सेवा,वचन सेवा)

प्रश्नः- तन सेवा क्या है ?

उत्तरः- तन सेवा से आश्रम में झाड़ू निकालना,पैर चम्पी करना,कपड़े आदि धोना।

निश्चल दास जी महाराज ने बताया है।

"तन करि बहुं सेवा विस्तारै, आज्ञा गुरु की कबहुं न टारै।"

प्रश्नः- मन सेवा क्या है?

उत्तरः- मन से गुरु के गुणगान गाना ,कभी भी गुरु के प्रति दोष नहीं रखना।

"मन मैं प्रेम रामसम राखै।
है प्रसन्न गुरु इम अभिलाखै।
दोष दृष्टि सुपने नहि आनै।
हरि हर ब्रह्म गंग रवि जानै।
गुरु मूरति को हिय मैं ध्यान॥
धारे जो चाहै कल्याना।"

प्रश्नः- धन सेवा क्या है?

उत्तरः- धन से गुरु का सम्मान करना चाहिए,

"पत्नि,पुत्र,भूमि, दासी।
दास, द्रव्य, ग्रह, बीहि विनासी।

Scanned by CamScanner

धन पद इन सबहिन के भाखै।
हे गुरु सरन दूरितिहि नाखै।"

प्रश्नः- वाणी सेवा क्या है?

उत्तरः- वाणी के द्वारा गुरु के गुणगान करना चाहिए।

"भाषत गुन गन गुरु के, बानी शुद्ध।
दोष न कबहुँ, अर्पन करि इम बुद्ध।।"

1.

दोहा

सद्गुरु आप अवनाशी, कॉटों भव की पाश।
ज्ञानानन्द शरणागत, पूरण करो मम आस।।

भजन

आप गुरु अवनाशी, पार करो भव जहाज।
पार करो भव जहाज ,म्हारी अरजी सुनो गुरु
आजा।टेर।।
असंख्य जुगा से भूल में जी, करतो रीयो अकाज।
बार-बार काल मारयो जी, ज्यों चिड्यों को बाजा।
मो ममता म आय पस्योजी,भूल गया जी सब नाज।
काम क्रोध का बनया बादला, हंकार रीयो गाजा।
आप गुरु सामर्थ स्वामी, सुनावो महावाक्य साज।
जीव ब्रह्म का भेद मिटाओं , बगड़ों सुधारों काजा।
अरज करू कर जोड़ के, सुनिय गरीब निवाज।

Scanned by CamScanner

ज्ञानानन्द शरणागत आयो, आप बचाओं लाज॥

2.

दोहा

नया डुबी भव सागर, कोई न त्यारणर हार।

ज्ञानानन्द कहाँ जाऊ, आयो थाके द्वार॥

भजन

मै शरण पड्यों गुरु देव , मेरी पार करो नया।टेर।

तीन दोष अन्तर में भारी, स्वरूप भूल रीया।

तीन काण्ड् वेदों का बताओं, आप से अरज किया॥

पाँच तत्व और पच्चीस प्रकृति, यामे उलझ रीया।

शब्द स्पर्श रूपरस गन्ध, याने मार्ग बन्ध किया॥

त्रिगुण माया अटपटी जी, यामे भूल गया।

काम क्रोध मद लोभ , मोह ने बेड़ा डूबो रीया॥

ज्ञान जहाज लेकर आवों, आपको अरज किया।

ज्ञानानन्द शरणागत आयो, तन-मन-धन वार दिया॥

3.

दोहा

गुरु आप बिन और नहीं, जग त्यारण जगदीश।

ज्ञानानन्द शरणागत, जरा मुझ पर कीजे रीस॥

भजन

सद्गुरु देवा वो कृपा किजे दीन पें।

म्हारों जन्म-मरणरो दुःख मेंट आयो मैं शरण तेरी॥टेर।

Scanned by CamScanner

ज्ञान विज्ञानये भक्ति भावना मैं नहीं जानता।

म्हाने खोल समझाओं सारी रीत।।

वाच्य और लक्ष्य का भेद कैसे जानों मै।

जीव ब्रह्मकर दो एक।।

जीवन मुक्ति का राज मोहे समझाओं।

मोहे पहुचावों विदह में टेठ।।

ज्ञानानन्द आप से करे विनती।

मन राखो सेवा में आजा।

4.

दोहा

गुरू आप छोड़ कहां जाऊ ,और नहीं कोई ठाम।

ज्ञानानन्द शरण में ,अब क्या दुझे से काम।।

भजन

राखोजी सद्गुरू शरणागत की लाज।

मैं भवसागर माई झूल रहयो, डूब रही मेरी जहाजा।

टेरा।

खेच किनारे आप लगाओं, सद्गुरु जी सिरताजा।

तीन ताप कि आग लगी है जल रीयों मै आज।

ज्ञान बारीस आप बरषाओं, सुख वीणा री साजा।

तत्मस्मि उपदेश सुनाओं, वाच्य लक्ष्य राज।

अहं ब्रह्म अनुभव दे ओ, परमार्थ के काजा।

तू दाता दुःख भजंना, मैं तेरो मोह-ताज।

Scanned by CamScanner

ज्ञानानन्द शरण में तेरी, ज्ञान भक्ति के काजा।

5.

दोहा

सूरज सम गुरू आप हो, मेटण तम अंधकार।
ज्ञानानन्द शरणागत, एक त्योरो ही आधार॥

सतगुरू देवाओ सुन लो मारी विनती ,
मैं दुखी बड़ो बेहाल, पिलाओ मोही ज्ञान जड़ी। टेर।
गंगा यमुनाओ तिर्थ मैं नहा लिया।
यासे मिट्यो नहीं मन को संताप ॥1॥
कर्म उपासनाओ किया मेनें भौ भारी।
यासै पायो नहीं विश्राम ॥2॥
अगम अपारीओं महिमा आपरी।
सुन आयो शरणा रे माहि ॥3॥
माणक मोतीओं गुरूजी मांगु नहीं।
मन राखो चरणारो दास ॥4॥
वेद महावाक्यओ खोल समझाएदो।
यही ज्ञानानन्द की पुकार ॥5॥

गुरू आरती

औम जय सतगुरू स्वामी, प्रभू जय सतगुरू स्वामी।
जड़ चेतन का मालिक , सब का अन्तरयामी ।टेर।
तन मन सब निर्मल, निर्मल है गुरू वाणी।
सुनत परम सुख उपजे , मिटज्या चारो खानी ॥1॥

Scanned by CamScanner

करूणा कर करूणा के सागर ,ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मवेता।
भव बन्धन सब काटो, मैं शरण आपकी लेता ॥2॥
दुख दरिद्र पास नहीं आवे ,जीवन मुक्ति देवें।
सतसंग भक्ति देके, अवगुण हर लेवें ॥3॥
सतगुरू सम देवा नहीं, देवन पती देव ।
काल क्रम भव व्याधि, पल में हर लेवा ॥4॥
तन मन धन सब कुछ है तेरा, कुछ भी नहीं मेरा।
तुम हो सो मैं हूँ, मैं हूँ सो तु मेटो भव फेरा ॥5॥
सतगुरू स्वामी जी की आरती, जो कोई नर गावे।
ज्ञानानन्द शरण सतगुरू की, अमरापुर पावें ॥6॥

श्री गुरु अष्ट्कम्

1.

सुरूप शरीर वचना सुत, धन सुमेरू समान।
गुरु चरण,प्रेम नहीं तो,सब कुछ थोथा जान॥

2.

चारो दिशा में यश हो, वैभव होय अपार।
प्रेम नहीं गुरु चरण से, वह यश भी बेकार॥

3.

धन जन माया मोखली, प्रारब्ध से हि पाय।
भक्ति नहीं गुरु चरण की, तत् प्रारब्ध की थाय॥

Scanned by CamScanner

वेद षटशास्त्र याद हो कविता करे विस्तार।
लग्न नहीं गुरु चरण में तो सब कुछ बेकार॥

5.

महिमा बड़ी संसार में, पूज्य देश परदेश।
प्रेम नहीं लगे गुरु चरण से, झूठा यह सभी भेष॥

6.

भूमण्डल के राजा भी, पूजे जाके चरण।
मन नहीं लगे गुरु चरण तो, जीते जी मरण॥

7.

घर परिवार छोड़ सभी, करे निरन्तर वास।
आश नहीं गुरु चरण की, तबतक रहे उदास॥

8.

यशोदान प्रताप से, चाले सालो-साल।
प्रिति नहीं गुरु चरण में, तो जीवन कगांल॥

9.

मणि मुक्तादि रतन सभी, ओर सकल संसार।
गुरु के श्री चरण बिन, पाते ना मोक्ष द्वार॥

10.

जो राजा यति सन्यासी, सदाचार गृहस्थ।
ज्ञानानन्द गुरु अष्टकम्, दिलावे मोक्ष का पंथ॥

इति गुरू अष्टकम् सम्पूर्णः।

Scanned by CamScanner

हे सो सुन्दर है सदा, नाहि सो नाहि।
नाहि सो ही प्रगट देखिये, हे सो दिखे नाहि।।1।।

लाली मेरे लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखने में गई, में भी हो गई लाल ।।2।।

सुन्दर आत्म अचल देह, देह चाले नही छानी।
कूप ठोर का ठोर, चलत है चड़स रू पानी ।।3।।

बादल दौर जात है, दौरत दीसे चन्द।
देह संग से आत्मा, चलत कहे मति मंद ।।4।।

परमेश्वर अरु परमगुरु, दोनों एक समान।
सुन्दर कहत विशेष यह, गुरु से पावे ज्ञान ।।5।।

Scanned by CamScanner